चौथी दुनिया

हिंदी का पहला साप्ताहिक अखबार

www.chauthiduniya.com

मूल्य 5 रुपये

दिल्ली, 9 नवंबर–15 नवंबर 2009

कब ख़त्म होगी भाजपा की महाभारत

सियासी दुनिया पेज 3

जल, जंगल, ज़मीन और सत्याग्रह

सियासी दुनिया पेज 4

जाति की जड़ों को काटती औरतें

प्रशासन दुनिया पेज 6

क्या नीलाम हो रहा है पाकिस्तान ?

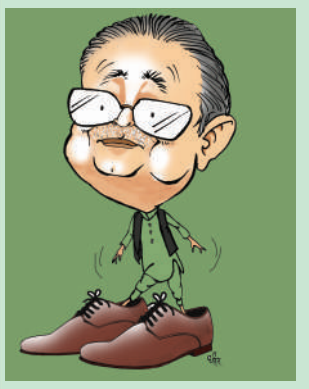

बाक़ी दुनिया पेज 10

फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

सरकार कहे कि यह रिपोर्ट झूठी है

रंगनाथ मिश्र आयोग की रिपोर्ट जिसे संसद में पेश होना था

शशि शेखर

वर्ष 2004 में गठित रंगनाथ मिश्रा आयोग (राष्ट्रीय धार्मिक एवं भाषाई अल्पसंख्यक आयोग) ने जुलाई 2007 में ही सरकार को अपनी रिपोर्ट सौंप दी थी. क़ानूनन, सरकार को छह महीने के भीतर एक्शन टेकेन रिपोर्ट (एटीआर–सरकार द्वारा की गई कार्रवाई की रिपोर्ट) के साथ आयोग की रिपोर्ट को संसद में पेश कर देना चाहिए था, लेकिन दो साल बाद भी ऐसा नहीं हो सका है. आख़िर आयोग की रिपोर्ट में ऐसा क्या है, जिसे सरकार सार्वजनिक नहीं करना चाह रही है? लेकिन, चौथी दुनिया के पास रंग नाथ मिश्रा आयोग की रिपोर्ट उपलब्ध है और यहां हम उसकी सिफ़ारिशों को प्रस्तुत कर रहे हैं:

अल्पसंख्यकों में पिछड़ा वर्ग

आयोग की राय में, पिछड़ा वर्ग की पहचान के लिए एक समान मापदंड होने चाहिए और वह होना चाहिए लोगों की शैक्षणिक और आर्थिक स्थिति, न कि उनकी जाति और धर्म. इसके लिए जनमत बनाने और इसके पक्ष में राष्ट्रीय सहमति बनाने की ज़रूरत होगी.

कौन है अल्पसंख्यक?

1. आयोग की अनुशंसाएं सिर्फ़ राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग एक्ट 1992 द्वारा अधिसूचित अल्पसंख्यकों के लिए नहीं, बल्कि सभी धार्मिक अल्पसंख्यकों (लक्षद्वीप, जम्मू–कश्मीर, मेघालय, मिज़ोरम और नागालैंड में हिंदू धार्मिक अल्पसंख्यकों सहित) के लिए है.
2. रिपोर्ट के मुताबिक़, अल्पसंख्यकों में उन सभी वर्गों और समूहों को पिछड़ा माना जाए, जिनकी तरह (जिनके समकक्ष) के लोग बहुसंख्यक हैं और वर्तमान स्कीम के तहत पिछड़े माने जाते हैं.
3. विभिन्न अल्पसंख्यकों में जिन लोगों को नीच माना जाता है, उन्हें पिछड़ा माना जाए.
4. अल्पसंख्यकों के उन सभी सामाजिक और पेशेवर समूहों को, जिन्हें वर्तमान व्यवस्था के तहत अनुसूचित जाति का दर्ज़ा दिए जाने की मांग है, सामाजिक तौर पर पिछड़ा माना जाए. भले ही उनका धर्म जाति व्यवस्था में विश्वास न करता हो.
5. अल्पसंख्यकों के वैसे समूहों को भी अनुसूचित जनजाति का दर्ज़ा दिया जाए जिनकी तरह के लोग बहुसंख्यक है और आदिवासी है.

कैसे होगा कल्याण?

शैक्षणिक उपाय

1. आयोग की राय में शिक्षा शब्द का अर्थ सिर्फ़ प्राथमिक, माध्यमिक, स्नातक या परास्नातक से नहीं है, बल्कि अल्पसंख्यकों की शैक्षणिक बेहतरी के लिए आयोग ने अपनी अनुशंसाओं में इंजीनियरिंग, मेडिकल, तकनीकी और लॉ जैसे प्रोफ़ेशनल एवं वोकेशनल कोर्स सहित प्रयोगशालाओं, छात्रावासों और पुस्तकालयों जैसे मुद्दे भी शामिल किए हैं.
2. रिपोर्ट में संविधान के अनुच्छेद 30 में सुधार के लिए तत्काल एक व्यापक क़ानून बनाने की बात की गई है.
3. राष्ट्रीय अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थान आयोग में इस तरह से सुधार किए जाने की अनुशंसा की गई है, ताकि यह आयोग संविधान द्वारा अल्पसंख्यकों को मिले शैक्षणिक अधिकारों को लागू करवा सके .
4. आयोग के मुताबिक़ सभी ग़ैर अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थानों में 15 प्रतिशत सीटें अल्पसंख्यकों के लिए सुनिश्चित की जानी चाहिए, जिनमें 10 प्रतिशत मुस्लिम और 5 प्रतिशत अन्य अल्पसंख्यक वर्ग के लिए हों.
5. देश के सबसे बड़े धार्मिक अल्पसंख्यक मुसलमानों के लिए आयोग ने कुछ ख़ास उपाय बताए हैं. जैसे:

- चुनिंदा संस्थानों, मसलन अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय और जामिया मिलिया इस्लामिया को मुस्लिम छात्रों में शिक्षा का प्रसार करने की ज़िम्मेदारी दे देनी चाहिए.
- मुस्लिमों द्वारा संचालित स्कूलों–कॉलेजों को अधिक से अधिक सहायता मिलनी चाहिए.
- मदरसा आधुनिकीकरण योजना को फिर से संशोधित करना चाहिए.
- केंद्रीय वक्फ काउंसिल को इस तरह का बनाया जाए कि इसका मुख्य उद्देश्य शिक्षा का विकास बन जाए.
- मौलाना आज़ाद एजूकेशनल फाउंडेशन के तहत दी जाने वाली धनराशि का उपयोग नए शैक्षणिक संस्थान खोलने के लिए भी किया जाना चहिए.
- आंगनवाड़ी, नवोदय स्कूल मुस्लिम बहुल क्षेत्रों में खोले जाएं और मुस्लिम परिवारों को वहां अपने बच्चे भेजने के लिए प्रोत्साहित भी किया जाना चाहिए.

आर्थिक उपाय

1. आयोग की रिपोर्ट में एक ऐसा प्रभावकारी तंत्र विकसित किए जाने की बात की गई है, जिससे छोटे–मोटे उद्योग–धंधों का आधुनिकीकरण किया जा सके और अल्पसंख्यकों में से कारीगरों व दस्तकारों को प्रशिक्षण देकर उन्हें रोज़गार मुहैया कराया जा सके.
2. विशेष योजनाएं बनाकर अल्पसंख्यकों को कृषि क्षेत्र में शामिल किए जाने की बात भी इस रिपोर्ट में है.

(शेष पृष्ठ 2 पर)

ऐसे लीक हुई यह रिपोर्ट

सरकार के क़ायदे–क़ानून कैसे आम और ख़ास आदमी का फ़र्क़ करती है? कैसे कोई रिपोर्ट लीक होती है? इसका एक बेहतरीन उदाहरण रंगनाथ मिश्रा आयोग की रिपोर्ट है. किसी आयोग की रिपोर्ट जब तक संसद के पटल पर पेश नहीं हो जाती, तब तक उसे सार्वजनिक नहीं किया जा सकता है. यही तर्क देकर अल्पसंख्यक मंत्रालय और सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय अब तक आयोग की रिपोर्ट को सार्वजनिक करने से मना कर रहे हैं. चौथी दुनिया के पास जो जानकारी है, उसके मुताबिक़ रंगनाथ मिश्रा आयोग ने अपनी रिपोर्ट की 1800 प्रतियां प्रकाशित कराई थीं, जिनमें से 1750 प्रतियां अल्पसंख्यक मंत्रालय, पांच प्रतियां प्रधानमंत्री कार्यालय और दो प्रतियां सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय को सौंप दी गई थीं. शेष 43 प्रतियां राष्ट्रीय धार्मिक एवं भाषाई अल्पसंख्यक आयोग (रंगनाथ मिश्रा आयोग) के पास रह गईं. अब सवाल उठता है कि अपनी रिपोर्ट सौंपने के बाद क्या आयोग के सदस्य की हैसियत आम नागरिक की नहीं हो जाती? और, यदि ऐसा है तो आयोग की समय सीमा ख़त्म हो जाने के बाद उसकी रिपोर्ट उसके सदस्यों के पास क्यों होनी चाहिए? क्या सरकार ने उन सदस्यों से रिपोर्ट वापस पाने की कोई कोशिश की? फिर 5 सदस्यीय आयोग के पास रिपोर्ट की 43 प्रतियां होने का क्या औचित्य है? ज़ाहिर है, इन सवालों के जवाब सरकार नहीं देना चाहेगी. पता नहीं, विशेषाधिकार और गोपनीयता का बहाना बनाकर मंत्रालय उस रिपोर्ट को क्यों सार्वजनिक नहीं करना चाहती, जो दरअसल पहले ही लीक हो चुकी है.

भारतीय संविधान जाति के आधार पर किसी भी तरह के भेदभाव को नकारता है. धर्म के आधार पर भी भेदभाव का निषेध है. जबकि वास्तव में ऐसा हो रहा है.

दिल्ली का बाबू

दिलीप चेरियन

रिक्त पदों की उलझन

झारखंड में आईएएस अधिकारियों की घटती संख्या से उत्पन्न प्रशासनिक संकट को हल करने की दिशा में राज्य सरकार द्वारा किए गए प्रयास नाकाफी हैं. भारतीय प्रशासनिक सेवा के लिए स्वीकृत 143 रिक्त पदों में से अभी तक सिर्फ़ 68 पदों पर ही नियुक्ति हुई है, इसलिए अगर कई बाबू एक साथ विभिन्न विभागों को संभाल रहे हैं तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है. एन एन सिन्हा, ए के सत्पथी और अर्जुन कुमार समेत कई बाबू तीन–तीन पदों पर विराजमान हैं. स्वास्थ्य विभाग के विशेष सचिव नितिन मदन कुलकर्णी न सिर्फ़ तीन पदों का काम देख रहे हैं, बल्कि जमशेदपुर के आदित्यपुर औद्योगिक क्षेत्र विकास प्राधिकरण (एआईएडीए) में परिवहन आयुक्त के साथ–साथ संयुक्त निदेशक का भी कामकाज देख रहे हैं!

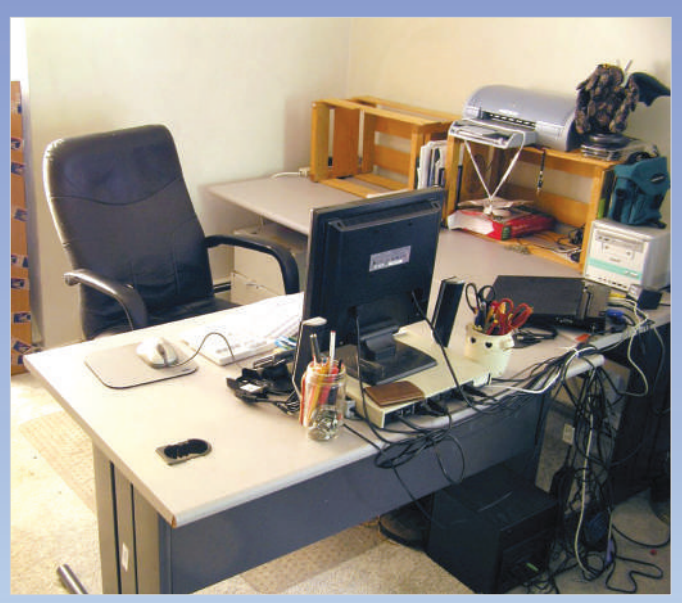

ग़रीबों के हितों के लिए चलाई गई राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना और प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना को लटकाने के सभी प्रयासों के बावजूद काम के बोझ तले बाबुओं की स्थिति राज्य में संतोषजनक नहीं है. बाबुओं के कुछ अन्य सहकर्मी केंद्रीय प्रतिनियुक्ति पर राज्य में वापस आने के इच्छुक नहीं हैं. इसी वजह से झारखंड में बाबुओं की कमी हो रही है. सूत्रों के मुताबिक़, लगभग 15 आईएएस अधिकारी इस समय दिल्ली में तैनात हैं. हालांकि केंद्र ने झारखंड कैडर में तीन बाबुओं को और शामिल किया है, लेकिन स्पष्ट तौर पर यह कतई पर्याप्त नहीं है.

समय से सीट पर बाबू लोग

अभी बमुश्किल एक महीना हुआ है, जब बायोमेट्रिक उपस्थिति प्रणाली ने गृह मंत्रालय की कार्य व्यवस्था को बदला था और अब इसके प्रभाव से बाबुओं ने समय पर आना शुरू कर दिया है. अब गृह मंत्रालय के लगभग 90 प्रतिशत अधीनस्थ कर्मचारी और 70 प्रतिशत कनिष्ठ कर्मचारी अपने–अपने कार्यालयों में नौ बजे ही उपस्थित हो जाते हैं. यह निश्चित तौर पर भारतीय बाबूगिरी के इतिहास की एक शानदार उपलब्धि है. सूत्रों के मुताबिक़, चिदंबरम के इस नए प्रयोग ने सरकारी हलकों में काफी हलचल मचा दी है. उनकी देखादेखी अब रेलवे, कोयला, उर्वरक, रसायन और वित्त मंत्रालय भी इस प्रणाली को अपनाने की सहमति ज़ाहिर कर चुके हैं. इसके अलावा हिमाचल प्रदेश सरकार भी इन मशीनों की इच्छुक है.

ग़ौरतलब है कि बैंक और कॉरपोरेट घराने कई वर्षों से बायोमीट्रिक आइडेंटिफिकेशन प्रणाली का प्रयोग कर रहे हैं. यहां तक कि दिल्ली नगर निगम ने भी पिछले साल इस प्रणाली को अपनाया था, हालांकि यह प्रयोग अपेक्षाकृत सफल नहीं हो पाया था, क्योंकि बाबुओं ने इन मशीनों को दरकिनार कर इससे बचने का रास्ता खोज लिया था. लेकिन, इस बार शायद चिदंबरम के नेतृत्व में बाबुओं को जल्द ही मुश्किल का सामना करना पड़ सकता है, क्योंकि उनकी देखरेख में बाबुओं के लिऐ स्कैनर को दरकिनार करना मुश्किल हो जाएगा.

रंगनाथ मिश्र आयोग की रिपोर्ट

पृष्ठ 1 का शेष

3. राष्ट्रीय अल्पसंख्यक विकास और वित्त बोर्ड को और प्रभावशाली बनाने के लिए इसके नियम, विनियम और प्रक्रिया में भारी फेरबदल की ज़रूरत पर बल दिया गया है.
4. सभी सरकारी योजनाओं, मसलन नरेगा व पीएमआरवाई आदि में भी 10 प्रतिशत स्थान मुस्लिमों और पांच प्रतिशत स्थान अन्य अल्पसंख्यकों के लिए सुनिश्चित किए जाने की बात आयोग की रिपोर्ट में कही गई है.
5. इसमें अल्पसंख्यकों को स्वरोज़गार के लिए प्रेरित करने के लिए भी कारगर रास्ते अपनाने की सलाह दी गई है.

आरक्षण : एक ज़रूरी क़दम

आयोग ने अपनी रिपोर्ट में सभी सरकारी (केंद्र और राज्य) नौकरियों में 15 प्रतिशत सीटें अल्पसंख्यकों के लिए आरक्षित करने की बात कही है. इसमें 10 प्रतिशत मुस्लिमों और पांच प्रतिशत अन्य अल्पसंख्यकों के लिए आरक्षण का प्रावधान है. आयोग के फ़ॉर्मूले के मुताबिक़, 27 प्रतिशत ओबीसी कोटे में से 8.4 प्रतिशत अल्पसंख्यकों को दिया जाए, जिसमें छह प्रतिशत मुस्लिमों और बाक़ी अन्य अल्पसंख्यक वर्ग के लिए हो.

ख़त्म हो संविधान का पैरा 3 (अनुसूचित जाति) आदेश 1950

आयोग ने अपनी रिपोर्ट में बताया है कि भारत के किसी एक धर्म की जाति अन्य धर्म में भी पाई जाती है. इनकी समस्याएं भी एक तरह की होती हैं. भारतीय संविधान जाति के आधार पर किसी भी तरह के भेदभाव को नकारता है. धर्म के आधार पर भी भेदभाव का निषेध है. जबकि वास्तव में ऐसा हो रहा है. संविधान के इसी प्रावधान को ध्यान में रखते हुए आयोग ने संविधान के पैरा 3 (अनुसूचित जाति) आदेश 1950 को ख़त्म कर देने की सलाह दी है, जिसके प्रावधान मुस्लिम, ईसाई, जैन और पारसी को अनुसूचित जाति का दर्ज़ा दिए जाने को निषेध करते हैं.

कैसे कार्यान्वित होंगी अनुशंसाएं

आयोग ने विस्तार से यह बताया है कि कैसे उपरोक्त अनुशंसाओं–सुझावों का कार्यान्वयन संभव हो सकता है.

- एक विस्तृत क़ानून को अधिनियमित किया जाए, ताकि संविधान के अनुच्छेद 30 का सही–सही कार्यान्वयन हो सके.
- राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग एक्ट 1993, संविधान के अनुसूचित जाति आदेश 1950, जनजाति आदेश 1951 और केंद्र व राज्य सरकार की अनुसूचित जाति और जनजाति सूची में संशोधन हो.
- केंद्र और राज्य स्तर पर अन्य पिछड़ा वर्ग के चयन की प्रक्रिया व क़ानून में संशोधन हो.
- प्रधानमंत्री के 15 सूत्रीय कार्यक्रम (1983), जिसे 2006 में सुधारा गया, को नियम क़ानून बना कर संवैधानिक दर्ज़ा दिया जाए.
- राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग एक्ट 1992, राष्ट्रीय शैक्षणिक संस्थान आयोग एक्ट 2004, वक्फ एक्ट 1993 व राष्ट्रीय अल्पसंख्यक विकास और वित्त बोर्ड में संशोधन किया जाए.
- एक संसदीय समिति का गठन हो, जो अल्पसंख्यकों से जुड़े मुद्दे देखेगी. एक राष्ट्रीय समिति की स्थापना हो, जिसमें एनएचआरसी, एनसीडब्ल्यू, एनसीबीसी, एनसीएससी, एनसीएससी, एनसीएम, एनसीएमइआई, एनएमडीएफसी, सीएलएम, केंद्रीय वक्फ परिषद, मौलाना आज़ाद फाउंडेशन के अध्यक्ष और कुछ विशेषज्ञ नामित हों और जिनका कार्य अल्पसंख्यकों के आर्थिक और शैक्षणिक विकास की निगरानी हो. इसी तरह की संस्थाएं सभी राज्यों में बनाई जाएं.
- एक राष्ट्रीय स्तर की समन्वय समिति की स्थापना हो, जिसमें सभी राष्ट्रीयकृत बैंकों के प्रतिनिधि हों, ताकि अल्पसंख्यकों को आसानी से क़र्ज़ मिल सके.
- देश के सभी ज़िलों में अल्पसंख्यक कल्याण समिति की स्थापना, जिसमें अधिकारी और स्थानीय एक्सपर्ट हों, जो अल्पसंख्यकों से जुड़े सभी मुद्दों के लिए एक नोडल एजेंसी की तरह काम करे.

रिपोर्ट का संसद में पेश होना क्यों ज़रूरी है?

आख़िर किसके लिए ज़रूरी है इस रिपोर्ट का संसद के पटल पर रखा जाना. इस सवाल का जवाब आपको मिल जाता है, जब आप तमिलनाडु के फ्रैंकलिन थॉमस सीजर से मिलते हैं. नेशनल काउंसिल ऑफ दलित क्रिश्चियन (एनसीडीसी) के नेशनल कोऑर्डिनेटर फ्रैंकलिन ऐसे समाज से ताल्लुक रखते हैं जो सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा होने के साथ–साथ विकास से भी कोसों दूर है. वह खुद को दलित ईसाई बताते हैं और इसका सबूत भी देते हैं. वह कहते हैं कि हमारे गांव में दो चर्च हैं और दो कब्रिस्तान. यहां तक कि ताबूत भी अलग–अलग हैं. संपन्न ईसाइयों के लिए अलग और हमारे लिए अलग. हद तो यह है कि सरकार और संविधान भी उनके साथ दोहरा मापदंड अपना रही है. कुछ ऐसी ही स्थिति उन मुसलमानों की भी है, जो सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े हुए हैं. मुसलमानों में भी जाति व्यवस्था के आधार पर भेदभाव है. फिर भी सरकार उन्हें दलित का दर्ज़ा देने को राजी नहीं है. जबकि सरकार द्वारा ही गठित रंगनाथ मिश्र आयोग (राष्ट्रीय धार्मिक एवं भाषाई अल्पसंख्यक आयोग) ने अपनी रिपोर्ट में स्वीकार किया है कि धार्मिक अल्पसंख्यकों (ईसाई और मुसलमान) की सामाजिक और शैक्षणिक स्थिति भी हिंदू दलितों की ही तरह है.

आयोग ने साफ़–साफ़ कहा है कि संविधान के पैरा 3 (अनुसूचित जाति) आदेश 1950 को ख़त्म कर दिया जाना चाहिए. दरअसल, राष्ट्रपति द्वारा जारी इसी आदेश के कारण सिर्फ़ वैसे लोगों को ही अनुसूचित जाति का दर्ज़ा मिल सकता है, जिनका संबंध हिंदू धर्म से है. हालांकि बाद में इस आदेश में संशोधन के ज़रिए सिख और बौद्ध धर्म को भी शामिल कर लिया गया. लेकिन अभी तक मुसलमानों और ईसाईयों को इस दायरे से बाहर ही रखा गया है. क्या राष्ट्रपति द्वारा जारी (अनुसूचित जाति) आदेश 1950 संविधान की धारा 14 (क़ानून के समक्ष समानता), धारा 15 (धर्म के आधार पर भेदभाव का निषेध) और धारा 25 (धर्म बदलने और मानने की स्वतंत्रता) की मूल भावना के ख़िलाफ़ नहीं है?

दरअसल वर्ष 2004 में ही सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े मुसलमानों व ईसाइयों को अनुसूचित जाति का दर्ज़ा देने के संबंध में प्रख्यात क़ानूनविद् शांति भूषण ने उच्चतम न्यायालय में एक जनहित याचिका डाली थी. जवाब में केंद्र सरकार ने बताया कि मिश्र आयोग से इस मामले को देखने को कहा गया है. आयोग ने तीन साल की गहन छानबीन और अध्ययन के बाद वर्ष 2007 में अपनी रिपोर्ट केंद्र सरकार को सौंप दी. तबसे लेकर आज तक यानी इन दो सालों से आयोग की रिपोर्ट सत्ता के गलियारों में भटक रही है.

इसी बीच कई राज्य सरकारों ने सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े मुसलमानों और ईसाइयों को अनुसूचित जाति का दर्ज़ा देने के संबंध में एक प्रस्ताव पारित कर केंद्र सरकार को भेजा. अपनी मृत्यु से कुछ दिनों पहले ही आंध्र प्रदेश के कांग्रेसी मुख्यमंत्री राजशेखर रेड्डी ने भी ऐसा ही एक प्रस्ताव केंद्र सरकार को भेजा था. लेकिन, केंद्र की यूपीए सरकार के लिए मानो इस सबका कोई अर्थ ही नहीं है. विभिन्न मुस्लिम सांसदों और संगठनो ने भी संसद के अंदर और बाहर इस मुद्दे पर आवाज़ उठाई है. जद(यू) सांसद और ऑल इंडिया पसमांदा मुस्लिम महाज के अध्यक्ष अली अनवर अंसारी सालों से इस मुद्दे पर आवाज़ उठाते आ रहे हैं.

अली अनवर कहते हैं कि जब रंगनाथ मिश्र आयोग का गठन यूपीए सरकार ने ही किया था तो उसकी रिपोर्ट संसद में लाने से सरकार क्यों परहेज़ कर रही है? क्यों इसे एक नाजायज़ औलाद की तरह छुपाया जा रहा है? यदि रिपोर्ट को जल्द से जल्द सार्वजनिक नहीं किया गया तो सरकार को इसका ख़ामियाज़ा भुगतने के लिए तैयार रहना चाहिए.

ज़ाहिर है, आयोग की रिपोर्ट यूपीए सरकार के लिए गले की हड्डी बन चुकी है. रिपोर्ट की अनुशंसाओं को लागू कर पाना सरकार के लिए आसान नहीं होगा. आरक्षण के मामले पर पहले भी सरकार की किरकिरी होती रही है. उधर उच्चतम न्यायालय का निर्देश है कि किसी भी सूरत में आरक्षण की सीमा 50 फ़ीसदी से अधिक नहीं होनी चाहिए.

ऐसे हालात में सरकार को मालूम है कि किसी के हिस्से का आरक्षण काटकर दलित मुसलमानों या दलित ईसाइयों को दे देना उसके वश की बात नहीं है. बावजूद इसके कभी न कभी तो आयोग की रिपोर्ट संसद में पेश करनी ही होगी. यानी कुल मिलाकर यूपीए सरकार के लिए एक तरफ़ कुआं तो दूसरी तरफ़ खाई वाली स्थिति बन चुकी है.

आयोग का गठन यूपीए सरकार ने ही किया था तो क्यों इसे एक नाजायज़ औलाद की तरह छुपा रही है? रिपोर्ट को जल्द से जल्द सार्वजनिक किया जाए.

अली अनवर अंसारी, सांसद जद(यू)

हमारे गांव में दो चर्च हैं और दो क़ब्रिस्तान. यहां तक कि ताबूत भी अलग-अलग हैं. बड़े लोगों के लिए अलग और हमारे लिए अलग.

फ्रैंकलिन थॉमस सीजर ,राष्ट्रीय समन्वयक, एनसीडीसी

चौथी दुनिया
देश का पहला साप्ताहिक अखबार

वर्ष 1 अंक 35, 9 नवंबर–15 नवंबर 2009

संपादक
संतोष भारतीय

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210–211 सेक्टर 63, नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के – 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय

के –2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग
कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001

कैंप कार्यालय एफ–2, सेक्टर –11, नोएडा
गौतमबुद्ध नगर उत्तरप्रदेश – 201301

फोन न.
संपादकीय 011–23418962
विज्ञापन + 0120–4783999
प्रसार + 91 9810017924
फैक्स न. 0120–4783950

पृष्ठ–16 (+4 बिहार व झारखंड)

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुन: प्रकाशन पर क़ानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

feedback@chauthiduniya.com

एक और महाभारत दक्षिण केप्रांत कर्नाटक में चल रहा है. यहां भी पार्टी के नेता आपस में ही एक-दूसरे को ख़त्म करने की साज़िश में लगे हैं. यहां भी भारतीय जनता पार्टी अपनी ही क़ब्र खोदने में लगी हैं.

कब ख़त्म होगी भाजपा की महाभारत

लोकसभा चुनाव में हार के बाद ऐसा ही कुछ राजस्थान और उत्तराखंड में भी हुआ. और कुछ समय पहले तकरीबन दूसरे सभी राज्यों में देखा गया. चुनाव परिणाम के बाद दिल्ली में यशवंत सिन्हा, अरुण शौरी और जसवंत सिंह ने आडवाणी और उनके नजदीकी नेताओं के ख़िलाफ़ विद्रोह का बिगुल बजाया. वहीं पार्टी अध्यक्ष राजनाथ सिंह के दूसरे नेताओं केसाथ मनमुटाव की बात सामने आती रही.

मनीष कुमार

भारतीय जनता पार्टी के सबसे वरिष्ठ नेता ने कुछ समय पहले कहा था कि आडवाणी भाजपा के राम हैं और स्वर्गीय प्रमोद महाजन, लक्ष्मण. अटल जी ने जब यह बयान दिया था, तब उन्हें इस बात का अंदाज़ा भी नहीं होगा कि भाजपा का त्रेतायुग इतनी जल्दी द्वापर युग में बदल जाएगा. अधर्मी रावण पर विजय पाने के बजाय परिवार के लोग आपस में ही लड़ने लगेंगे और पार्टी के अंदर महाभारत शुरू हो जाएगा. राम धृतराष्ट्र में बदल जाएंगे. पार्टी में दुर्योधन, दु:शासन और शकुनी जैसे षड्यंत्रकारियों का बोलबाला हो जाएगा. युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन जैसे शूरवीरों को अज्ञातवास में जाना पड़ेगा. आज की भाजपा का हाल देखकर अटल जी का कलेजा जरूर कचोटता होगा.

झारखंड का चुनाव सिर पर है, लेकिन पार्टी की रणनीति अभी तक साफ़ नहीं हो पाई है. इस चुनाव में भारतीय जनता पार्टी के पास न तो कोई सर्वमान्य नेता हैं और न ही ऊर्जावान व पार्टी के लिए काम करने वाले कार्यकर्ता. पार्टी में फूट की स्थिति ऐसी है कि उम्मीदवारों के नाम आने से पहले ही भाजपा कार्यकर्ता इस बात पर बहस कर रहे हैं कि इस बार हमारा मुख्यमंत्री आदिवासी होगा या नहीं. मतलब यह कि पार्टी झारखंड में आदिवासी और ग़ैर आदिवासी में बंटी हुई है. भाजपा के सामने दूसरा ख़तरा पार्टी से रूठे हुए नेताओं से है. इसमें सबसे प्रमुख यशवंत सिन्हा हैं. लोकसभा चुनाव में यशवंत सिन्हा ने काफ़ी मेहनत की थी, पार्टी को एकजुट करने में. वह लगभग हर इलाक़े में गए. लेकिन पार्टी के केंद्रीय नेतृत्व से वह नाराज़ चल रहे हैं. भाजपा की तीसरी समस्या उन नेताओं से है, जो पार्टी छोड़कर दूसरी पार्टी में चले गए हैं या फिर उन्होंने अपनी अलग पार्टी बना ली है. इसमें पूर्व मुख्यमंत्री बाबूलाल मरांडी मुख्य हैं. झारखंड में इनका नाम भाजपा के सबसे बड़े नेता के रूप में आता था. अब उन्होंने नई पार्टी बना ली है. अपने समर्थकों के साथ-साथ भाजपा के कई कार्यकर्ताओं को भी वह अपने साथ ले गए. झारखंड का चुनाव भारतीय जनता पार्टी के लिए सचमुच महाभारत जैसा है. मैदान में जो सामने हैं, वे अपने ही हैं.

एक और महाभारत दक्षिण के प्रांत कर्नाटक में चल रहा है. यहां भी पार्टी के नेता आपस में ही एक-दूसरे को ख़त्म करने की साज़िश में लगे हैं. यहां भी भारतीय जनता पार्टी अपनी ही क़ब्र खोदने में लगी हैं. हाल यह है कि पार्टी दो भागों में बंट चुकी है. कोई मुख्यमंत्री बना रहना चाहता है और कोई उसे हटाकर ख़ुद मुख्यमंत्री बनने का सपना देख रहा है. कर्नाटक की भाजपा सरकार को इस बात से कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता है कि राज्य का एक इलाक़ा बाढ़ से तबाह हो चुका है. वहां की जनता को मदद की ज़रूरत है, लेकिन मुख्यमंत्री के साथ-साथ मंत्रिमंडल के ज़्यादातर सदस्य दिल्ली में केंद्रीय नेताओं के घरों के चक्कर लगा रहे हैं. सच्चाई तो यह है कि कर्नाटक के लोगों को इस बात से ज़रा भी फ़र्क़ नहीं पड़ेगा कि प्रदेश का मुख्यमंत्री कौन बनता है. लेकिन आने वाले समय में सत्ता का यह संघर्ष भारतीय जनता पार्टी के लिए काफ़ी महंगा पड़ने वाला है.

कर्नाटक में बहुमत हासिल करना भाजपा के लिए ऐतिहासिक मौक़ा था, जिसे पार्टी के नेताओं और मंत्रियों ने अपने हाथ से गंवा दिया. इससे कर्नाटक की जनता का विश्वास टूटा है. इस बीच, हैरतअंगेज़ तरीक़े से अनंत कुमार पूरे मामले से ग़ायब हैं. इससे तो दो बातें सामने आती हैं. एक तो यह कि या तो वह इस मामले के सूत्रधार हैं या फिर उन्हें किसी रणनीति के तहत इससे दूर रखा गया है. इसमें कोई शक नहीं है कि भाजपा के केंद्रीय संगठन में कर्नाटक के सबसे बड़े नेता अनंत कुमार हैं. वे आडवाणी और अरुण जेटली के निकटतम हैं. पार्टी के हर निर्णय में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है. अब उनके ही राज्य में इतना बड़ा बवंडर खड़ा हो गया और अनंत कुमार चुपचाप बैठे हैं. वैसे कर्नाटक का मामला जब से दिल्ली पहुंचा है, तब से बिना जनसमर्थन वाले भाजपा के राष्ट्रीय नेता फिर उन्हीं कामों में जुट गए, जिससे पार्टी को सबसे ज़्यादा नुक़सान होता है.

लोकसभा चुनाव में हार के बाद ऐसा ही कुछ राजस्थान और उत्तराखंड में भी हुआ. और कुछ समय पहले तक़रीबन दूसरे सभी राज्यों में देखा गया. चुनाव परिणाम के बाद दिल्ली में यशवंत सिन्हा, अरुण शौरी और जसवंत सिंह ने आडवाणी और उनके नजदीकी नेताओं के ख़िलाफ़ विद्रोह का बिगुल बजाया. वहीं पार्टी अध्यक्ष राजनाथ सिंह के दूसरे नेताओं के साथ मनमुटाव की बात सामने आती रही. दिल्ली हो या राज्यों की राजधानियां, हर जगह भारतीय जनता पार्टी में भीतरघात और मतभेद का बोलबाला है. पार्टी संगठन में अविश्वास, दिशाहीनता और अनुशासनहीनता अपने चरम पर है. दुख की बात यह है कि पार्टी के अंदर यह सब आडवाणी जी के रहते हो रहा है.

बात सिर्फ़ भारतीय जनता पार्टी की होती तो शायद कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता. मुश्किल यह है कि भारतीय जनता पार्टी मुख्य विपक्षी पार्टी है, जो दिन ब दिन कमज़ोर होती जा रही है. संसदीय प्रणाली की यह ज़रूरत है कि सरकार के साथ-साथ सरकार के कामकाज पर नज़र रखने के लिए विपक्ष की भी परोक्ष रूप से एक कैबिनेट होती है. पिछली बार, 2004 से 2009 तक भारतीय जनता पार्टी ने यह काम भलीभांति किया. आपको भी याद होगा कि जब कभी वित्त मंत्रालय पर सवाल उठाना होता था तो जसवंत सिंह भाजपा की तरफ़ से सरकार पर हमला बोलते थे. ठीक वैसे ही, जैसे विदेश मामलों पर यशवंत सिन्हा सरकार से सवाल-जवाब किया करते थे. आडवाणी जी गृह मंत्रालय के कामकाज पर निगरानी रखते थे. एनडीए के गठन से पहले अटल जी संसद में हमेशा प्रधानमंत्री से तीखे सवाल पूछा करते थे. उमा भारती, अरुण शौरी, सुषमा स्वराज, स्वर्गीय प्रमोद महाजन और मुरली मनोहर जोशी संसद में विपक्ष की ऐसी भूमिका निभाते थे, जिसकी तारीफ़ भाजपा के विरोधी भी करते थे. यह एक मुख्य वजह थी कि देश की जनता ने उन्हें सरकार चलाने का मौक़ा दिया. लेकिन 2004 में चुनाव हारने के बाद भारतीय जनता पार्टी मुख्य विपक्षी पार्टी तो रही, लेकिन अपनी भूमिका को निभाने में वह पूरी तरह विफल रही. तीन साल तो भारतीय जनता पार्टी को हार स्वीकारने में लगे. इस बीच वाममोर्चा ने विपक्ष का जिम्मा अपने हाथों में ले लिया. एक अजीबोग़रीब स्थिति पैदा हो गई. जो मुख्य विपक्षी पार्टी थी, वही हताश होकर बैठ गई. और जो लोग सरकार को बाहर से समर्थन दे रहे थे, वे विपक्ष की भूमिका में मैदान में उतर गए. इसी वजह से जनता ने भारतीय जनता पार्टी और वाममोर्चा को चुनाव में भारी सबक सिखाया.

प्रजातंत्र में सत्तापक्ष की तरह विपक्ष की भी एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है, जो किसी भी मायने में सत्तापक्ष से ज़्यादा अहम है. यह विपक्ष का ही कर्तव्य है कि वह सरकार को अपनी मनमानी करने से रोके. यह विपक्ष की ही भूमिका है कि वह इस बात पर नज़र रखे कि जनता के अधिकार, सरकार की नीतियां और योजनाओं की दिशा व दशा कानून सम्मत व संवैधानिक मूल्यों के अनुरूप है. इसके लिए यह ज़रूरी है कि विपक्ष न केवल तेज़तर्रार हो, बल्कि दूरदर्शी भी हो. वह सरकार की कमियां तो बताए ही, उसके पास वैकल्पिक नीतियां होना भी ज़रूरी है, जिसका इस्तेमाल वह सरकार की आलोचना में कर सके. इन्हीं गुणों की बदौलत विपक्ष किसी भी सरकार को बेलगाम होने से रोक सकती है. भाजपा को यह भी समझना होगा कि अगर वह पांच साल तक सशक्त विपक्ष की भूमिका निभाने में कामयाब होती है, तभी जनता उसे फिर से सरकार बनाने का मौक़ा दे सकती है. जिस विपक्ष के पास कोई वैकल्पिक योजना न हो, दूरदर्शिता न हो और जनता तक अपनी बात पहुंचाने का कोई सक्षम तंत्र न हो, वह सरकार को मनमानी करने से नहीं रोक सकता है और न ही चुनाव जीत कर सरकार ही बना सकता है.

इन्हीं कमियों की वजह से पिछले लोकसभा चुनाव में जनता ने भाजपा को सिरे से नकार दिया. इसके बावजूद भारतीय जनता पार्टी को हक़ीक़त समझ में नहीं आई. नई सरकार गठित हुए महीनों गुज़र गए. महंगाई आसमान को छू रही है. उद्योग-धंधे रसातल में जा रहे हैं. युवा बेरोज़गार हैं. देश के किसान भूख से आत्महत्या कर रहे हैं. मज़दूरों की स्थिति बद से बदतर होती जा रही है. सरहद पर चीन अपनी मनमानी कर रहा है. पूरे देश में आतंकवाद का ख़तरा मंडरा रहा है. नक्सलवाद मुंह फाड़े खड़ा है और देश का मुख्य विपक्षी दल अंदरूनी कलह से जूझ रहा है. मुख्य विपक्षी दल के नेताओं को पार्टी के अंदर चल रहे महासंग्राम से फ़ुर्सत नहीं मिल रही है. नतीजा यह है कि भाजपा दिन ब दिन कमज़ोर होती जा रही है और एक के बाद एक हर चुनाव हारती जा रही है तथा पार्टी के कार्यकर्ता हताशा में डूबे हैं. संगठन बिखर चुका है. विचारधारा को लेकर लोग असमंजस में हैं. ऐसा लगता है, मानों जनता की समस्या दूर करने का भाजपा के पास कोई उपाय ही नहीं है. कोई आर्थिक एजेंडा उसके पास नहीं है. संसद में सरकार को घेरने वाला कोई नेता नहीं है. अब तो यही कहा जा सकता है कि निराशा भाजपा की नियति बन चुकी है.

manish@chauthiduniya.com

बिशन बाई, कैलाशी, नर्मदा और इन जैसे हज़ारों भूमिहीन ग़रीब आदिवासी, किसान और मजबूर लोग अलग-अलग राज्यों से एकता परिषद के नेतृत्व में इन दिनों जंतर-मंतर पर शांतिपूर्ण धरना दे रहे हैं और सरकार से राष्ट्रीय भूमि सुधार नीति लागू करने की मांग कर रहे हैं.

दिल्ली, 9 नवंबर–15 नवंबर 2009 चौथी दुनिया

एकता परिषद की जनादेश यात्रा

जल, जंगल, ज़मीन और सत्याग्रह

पेट के लिए रोटी, रोटी के लिए ज़मीन और ज़मीन के लिए जनादेश. यह महज़ एक नारा नहीं है, यात्रा है. यह यात्रा है, देश के उन 25 करोड़ लोगों के नुमाइंदों की, जो शोषित हैं, वंचित हैं, भूमिहीन हैं, ग़रीब हैं. एकता परिषद की अगुवाई में देश के विभिन्न हिस्सों से 25 हज़ार भूमिहीन और वंचित लोग अक्टूबर 2007 में भूमि सुधार क़ानून लागू करने की मांग लेकर दिल्ली पहुंचे थे. अपने ठिकानों से पैदल चलकर यहां आए उक्त लोग अनुशासित और शांतिपूर्ण तरीक़े से अपनी बात रखकर वापस चले गए. लेकिन दो साल पूरे होने के बाद भी जब सरकार ने भूमि सुधार नीति घोषित नहीं की तो एक बार फिर वही लोग दिल्ली के जंतर-मंतर पर इकट्ठा हुए हैं. मांग वही है, ज़मीन दो या जेल.

इस सत्याग्रह में मध्य प्रदेश के शिवपुरी जिले की बिशन बाई भी आई है. अपना दुखड़ा सुनाते समय बिशन बाई के चेहरे पर आक्रोश और लाचारी के भाव एक साथ तैरते हैं. वन विभाग के अधिकारियों का नाम लेते वक़्त उसकी आवाज़ में इतनी कड़वाहट भर जाती है, जिसे ख़त्म कर पाना नामुमकिन सा लगता है. अपनी ज़मीन खोने का दर्द उसकी आंखों में सहज ही दिख जाता है. वह ज़मीन, जिस पर पिछले 20 सालों से बिशन बाई और उसका परिवार खेती करके अपना गुज़र-बसर कर रहा था. लेकिन, पिछले ही साल वन विभाग ने उस पर क़ब्ज़ा कर लिया. ज़मीन गई तो बिशन बाई ने जीवनयापन के लिए जंगल से लकड़ी चुनकर बेचना शुरू कर दिया, लेकिन वन विभाग को यह भी मंजूर नहीं था. सो, झूठे मुक़दमे में फंसाकर बिशन बाई और उसकी तीन बहुओं को जेल भिजवा दिया गया. बिशन बाई के साथ ही दिल्ली आई कैलाशी रोते हुए बताती है कि अब तो दो वक़्त की रोटी मिल पाना भी मुश्किल हो रहा है, उस पर वन विभाग के अधिकारी हमसे मारपीट और बदसलूकी भी करने लगे हैं.

चेहरे पर असंख्य झुर्रियों के बावजूद नर्मदा की आंखों में चमक है. नर्मदा को इस बात का ज़्यादा अफ़सोस नहीं है कि बीपीएल सूची में उसका नाम नहीं है या वृद्धावस्था पेंशन नहीं मिलती. उम्र के अंतिम पड़ाव पर आकर भी नर्मदा अपनी आने वाली पीढ़ियों को उनका अधिकार देकर जाना चाहती है. अधिकार उस ज़मीन पर, जिस पर अभी वह खेती करती है, लेकिन ज़मीन पर उसका मालिकाना हक नहीं है. ज़मीन कब छिन जाएगी, कुछ पता नहीं है. सो, वह भी इस आंदोलन के ज़रिए अपना और अपने परिवार का हक़ सुनिश्चित करने दमोह से दिल्ली आई है.

बिशन बाई, कैलाशी, नर्मदा और इन जैसे हज़ारों भूमिहीन ग़रीब आदिवासी, किसान और मजबूर लोग अलग-अलग राज्यों से एकता परिषद के नेतृत्व में इन दिनों जंतर-मंतर पर शांतिपूर्ण धरना दे रहे हैं और सरकार से राष्ट्रीय भूमि सुधार नीति लागू करने की मांग कर रहे हैं. उड़ीसा के खुर्दा से आए विश्वंबर जानी को हिंदी नहीं आती. उनके एक साथी विश्वंबर के लिए दुभाषिया का काम कर रहे हैं. वे बताते हैं कि विश्वंबर के पुरखों की ज़मीन एक भू-माफिया ने जालसाजी करके हथिया ली और ऊंचे दामों पर किसी को बेच दी. झांसी से आए राम गोपाल के पास ज़मीन का एक अदद टुकड़ा नहीं है. चार लोगों का उनका परिवार है. राम गोपाल बताते हैं कि जॉब कार्ड तो मिला है, लेकिन काम नहीं मिलता. काम मिलता है तो पूरा पैसा नहीं मिलता. ऐसे में परिवार का गुज़र-बसर कैसे होता होगा, इसकी तो बस कल्पना ही की जा सकती है. बिहार के जहानाबाद निवासी राजकुमार की अपनी अलग ही समस्या है. उनके इलाक़े में उदेर स्थान परियोजना के तहत सिंचाई के लिए एक नहर बनाई गई थी, जिसमें पानी कभी आता ही नहीं है. सूखे के चलते फसल नहीं हुई. जब पेट की आग गर्म हुई तो उसे बुझाने के लिए राजकुमार ने गांव में ही मज़दूरी करनी शुरू कर दी है. बिहार सरकार ने उस नहर पर बैराज बनाने की घोषणा तो की, लेकिन आज तक उसमें पानी नहीं आ सका है. कलोथर सतना के रहने वाले हैं, आदिवासी हैं. इनके पास न तो जॉब कार्ड है और न ही राशनकार्ड. 15 वर्षों से जिस ज़मीन पर खेती कर रहे हैं, उसका पट्टा इनके पास नहीं है. हर वक़्त ज़मीन खोने की चिंता सताती रहती है. पट्टा देने में पटवारी से लेकर अधिकारी तक आनाकानी कर रहे हैं. कलोथर कहते हैं कि मतदाता सूची में पांच नाम शामिल करवाने के लिए पटवारी ने उनसे दो हज़ार रुपये लिए. वह 2001 से ही एकता परिषद से जुड़े हुए हैं और इसके माध्यम से अपने हक़ की लड़ाई लड़ने दिल्ली आए हैं.

चेहरे पर असंख्य झुर्रियों के बावजूद नर्मदा की आंखों में चमक है. नर्मदा को इस बात का ज़्यादा अफ़सोस नहीं है कि बीपीएल सूची में इनका नाम नहीं है या वृद्धावस्था पेंशन नहीं मिलती.

दरअसल, 2007 की जनादेश पदयात्रा के बाद सरकार ने प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में राष्ट्रीय भूमि सुधार परिषद समिति का गठन कर दिया था. साथ ही राष्ट्रीय भूमि सुधार समिति का भी गठन किया गया था. सितंबर 2009 में एकता परिषद ने प्रधानमंत्री और केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्री को पत्र लिखकर यह अनुरोध किया कि जनादेश यात्रा के दो साल पूरे होने के मौक़े पर केंद्र सरकार की ओर से राष्ट्रीय भूमि सुधार नीति की घोषणा की जानी चाहिए. राष्ट्रीय भूमि सुधार समिति अपनी रिपोर्ट प्रधानमंत्री को सौंप भी चुकी है. इसके अलावा, 13 अक्टूबर 2009 को केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्री द्वारा राष्ट्रीय भूमि सुधार समिति की बुलाई गई बैठक में समिति के सभी सदस्यों ने एकमत होकर सरकार से राष्ट्रीय भूमि सुधार नीति घोषित करने को कहा है.

राष्ट्रीय भूमि सुधार समिति ने भी अपनी रिपोर्ट में कहा है कि भूमि एक ऐसी पूंजी है, जो जीवन के सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक तंत्र का मूल आधार है. ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के जीवन का आधार आज भी भूमि और प्राकृतिक संसाधन ही हैं. अत: भूमि अधिकार और प्राकृतिक संसाधनों तक आम आदमी की पहुंच केवल आर्थिक अधिकार का ही प्रश्न नहीं, बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में बसने वाले सभी लोगों के आत्मविश्वास से जुड़ा अधिकार है. समिति ने केंद्र सरकार के क़ानून यानी वन अधिकार क़ानून (फॉरेस्ट राइट एक्ट) को कारगर ढंग से लागू करने की भी सलाह दी है. समिति ने अपनी सिफ़ारिश में कहा है कि आदिम जनजाति समुदायों के भूमि क़ब्ज़े को मान्यता दे दी जाए. फॉरेस्ट राइट एक्ट भी आदिवासियों को जंगल एवं वन भूमि पर अधिकार देने की बात करता है. बावजूद इसके, आज भी लाखों आदिवासियों को जंगल पर उनके पारंपरिक अधिकार से वंचित किया जा रहा है. ग़रीबों से उनकी भूमि छीनी जा रही है.

तीन दिनों तक जंतर-मंतर पर धरना प्रदर्शन के बाद इन लोगों ने संसद की ओर मार्च किया. अपनी मांगों और आवाज़ को सरकार के कानों तक पहुंचाने की कोशिश की. एकता परिषद के अध्यक्ष राजगोपाल जी कहते हैं कि भूमि सुधार नीति के अभाव में तेज़ी से ग़रीबों के हाथों से ज़मीन छिनती जा रही है, जिसकी जवाबदेही सरकार की है. वह कहते हैं कि जनादेश 2007 के आंदोलन के बाद यदि सरकार अपने वादे को पूरा नहीं करती है तो जन सत्याग्रह 2012 में एक लाख भूमिहीनों और वंचितों के साथ देश की संसद की ओर कूच किया जाएगा.

ज़ाहिर है, लाखों लोगों की यह लड़ाई जल, जंगल और ज़मीन की है. आज देश नक्सलवाद के रूप में संगठित हिंसा को झेल रहा है. सरकार और उसकी मशीनरी भले ही नक्सलवाद को कुचलने की बात करती हो, लेकिन वह इन लोगों के साथ क्या करेगी, जो शांतिपूर्ण तरीक़े से अपनी बात उसके सामने रख रहे हैं?

शशि शेखर
feedback@chauthiduniya.com

सभी फोटो– प्रभात पाण्डेय

पावन बदरीनाथ धाम पहुंच कर हर वर्ष लाखों लोग भले ही ख़ुद के मोक्ष की कामना करते हैं, किंतु इस धाम की कोख़ में बसे दर्ज़न भर से अधिक गांव के हज़ारों लोग हर वर्ष विस्थापन के साथ नारकीय जीवन जीने को मजबूर हैं.

भारत के आख़िरी गांव की मुश्किलें

सुनने में भले ही आपको अटपटा लग सकता है, लेकिन वह छह महीने की अवधि सीमावर्ती गांवों के लोगों के लिए किसी आजीवन कारावास से कम नहीं होती है. घर, खेत-खलिहान और गांव छोड़कर आधा बरस तक कहीं दूर खुले में रहना कितना कष्टकर होता है, यह तो कोई भुक्तभोगी ही बेहतर बयान कर सकता है. लेकिन, इसका कोई स्थाई समाधान तो निकाला ही जा सकता है.

राजकुमार शर्मा

देवभूमि उत्तराखंड के प्रसिद्ध बदरीनाथ धाम से लगे देश के अंतिम गांवों माणा बाक्णी, धनोली और बदरीनाथ आदि के सैकड़ों लोगों को लीन पीरियड में अपना गांव-घर छोड़ना पड़ रहा है. इससे उनका विकास बाधित हो रहा है. लीन पीरियड की समयावधि पहले मात्र तीन माह थी, लेकिन वर्ष 1962 में हुए भारत-चीन युद्ध के बाद सुरक्षा कारणों से इसे बढ़ाकर छह महीने कर दिया गया.

हर वर्ष होने वाले इस अस्थाई प्रवास से सीमावर्ती गांवों के बच्चे अशिक्षित रह जाते हैं. केंद्र एवं राज्य सरकार द्वारा संचालित योजनाएं भी यहां के लोगों के लिए बेमानी साबित हो रही हैं. पर्यटकों के बीच अपना प्रचार करने के लिए भारतीय स्टेट बैंक ने इन गांवों के शत-प्रतिशत संतिप्त होने का बोर्ड तो लगा रखा है, किंतु ज़मीनी हक़ीक़त यह है कि यहां का अधिकांश श्रमिक साहूकार के कर्ज़ के बोझ से दबा हुआ है. केंद्र सरकार द्वारा संचालित महात्मा गांधी नेशनल रोज़-गार गारंटी योजना भी यहां के लोगों के लिए छलावा साबित हो रही है, क्योंकि वे छह महीने तक इस रोज़गार से वंचित रहते हैं. हर छह महीने में घर, खेत एवं गांव छोड़कर अपने मवेशियों के साथ कहीं और जाकर रहना किसी पीड़ा से कम नहीं है. ऐसे में बच्चों की पढ़ाई बाधित होती है, रोज़गार के अवसर छिन जाते हैं और विकास की हर धारा रुक जाती है. पावन बदरीनाथ धाम पहुंच कर हर वर्ष लाखों लोग भले ही ख़ुद के मोक्ष की कामना करते हैं, किंतु इस धाम की कोख़ में बसे दर्ज़न भर से अधिक गांव के हज़ारों लोग हर वर्ष विस्थापन के साथ नारकीय जीवन जीने को मजबूर हैं. वे यह दंश सदियों से झेल रहे हैं. आज़ादी मिलने के बाद लोगों में इस उम्मीद ने जन्म लिया था कि तीन माह का यह लीन पीरियड समाप्त हो जाएगा, लेकिन इस काल से मुक्ति की बात कौन कहे, 1962 के भारत-चीन युद्ध के बाद इसकी अवधि बढ़ाकर छह माह कर दी गई है. अब यहां छह महीने (मध्य अक्टूबर से अप्रैल के अंतिम सप्ताह या मई के प्रथम सप्ताह तक) सेना पुलिस का कैंप रहता है. यहां आने के लिए ग्रामीणों को अधिकारियों से परमिट लेना पड़ता है.

कहने को तो यहां भी पंचायती राज व्यवस्था लागू है. निर्वाचित ग्राम पंचायतों को पूरे पांच वर्ष तक अपनी ग्राम सभा में सभी विकास योजनाओं को चलाने की ज़िम्मेदारी और अधिकार हासिल हैं, लेकिन इन पंचायतों का यह दुर्भाग्य है कि इनके प्रतिनिधि विकास की जिस गाड़ी को छह माह तक आगे बढ़ाते हैं, वह फिर अपनी पुरानी जगह पर पहुंच जाती है. लीन पीरियड में पूरा का पूरा गांव उठकर अलग-अलग गांवों में बस जाता है और उसे स्थानीय ग्राम सभा के अधीन चलना पड़ता है. इन गांवों के प्रधान खानापूर्ति के लिए बैठकें करने के अलावा कुछ नहीं कर सकते. माणा गांव की प्रधान गायत्री देवी कहती हैं कि हमें अपने प्रतिनिधियों की बैठक इसलिए करनी पड़ती है कि कहीं खानापूर्ति के अभाव में गांव सभा भंग न हो जाए.

चमोली जनपद में स्थित पांडुकेश्वर से ऊपर के सभी गांवों को एक तरह के विस्थापन का दर्द झेलना पड़ता है. माणा गांव में लोगों की संख्या लगभग 1785 है, जिसमें 1096 लोग अपने मताधिकार का प्रयोग भी कर चुके हैं. यहां के लोग लीन पीरियड में धिंधराण, ज्यावगढ़, जोशीमठ, नैगोड़ा, मल्ला, तल्ला, धिंगराज, सेंदुणा और नरो आदि नौ गांवों में अलग-अलग बंटकर रहते हैं. इस दौरान ख़ाली किए गए गांवों में कोई विकास कार्य नहीं होता. केंद्र सरकार की मनरेगा योजना के लागू होने से लोगों में एक आस जगी थी कि इससे उन्हें सौ दिन रोज़गार अवश्य मिलेगा, लेकिन यह योजना भी लीन पीरियड की काली छाया की चपेट में आ गई. सरकार की जन वितरण प्रणाली का भी लाभ इन ग्रामीणों को वर्ष भर नहीं मिल पाता है. बाम्णी गांव के लोग बताते हैं कि माइग्रेशन के समय उनका परिवार सेंदुणा गांव में रहता है. उनकी गांव सभा के अंतर्गत आने वाली राशन दुकान सत्रह किलोमीटर दूर पहाड़ी दुर्गम मार्ग से होकर गुज़रने के बाद पड़ती है. वहां से अनाज, चीनी और केरोसिन ढोकर लाना कठिन काम है. इन लोगों के लिए मोबाइल जन वितरण प्रणाली की व्यवस्था होनी चाहिए. इन्हें तो छह माह तक मेहनत मज़दूरी करके साल भर के जीवनयापन की भी व्यवस्था करनी पड़ती है.

युगों से यह मान्यता है कि इस पावन धाम से मोक्ष का मार्ग प्रशस्त होता है, किंतु यहां के लोगों की हालत तो चिराग तले अंधेरा वाली कहावत को चरितार्थ करती है. यह कहानी हर वर्ष देशी-विदेशी मीडिया हरि अनंत हरि कथा अनंता की तरह जपता है, किंतु इन ग्रामीणों की दिक़्क़तों का समाधान किसी को भी नहीं सूझता और न ही कोई इस संदर्भ में किसी तरह की कोई पहल करने की जहमत उठाता है. और तो और, उत्तराखंड के चार पावन धामों में श्रद्धालुओं-पर्यटकों की सुविधा के लिए बनाई गई बदरी-केदार मंदिर समिति के दर्ज़नों कर्मचारियों को भी छह महीने की नौकरी में ही पूरे साल भर गुज़र-बसर करना पड़ता है.

feedback@chauthiduniya.com

नक़ली खाद का असली कारोबार

अग्रवाल के पुरानी सब्जी मंडी स्थित अग्रवाल कृषि सेवा केंद्र और डालीबाबा वैष्णव देवी मंदिर के पास स्थित गोदाम में छापा मारने का आदेश दिया. गंगेले कोतवाल विमल श्रीवास्तव को लेकर मनीष अग्रवाल के गोदाम पर जा पहुंचे. जब पुलिस बल ने गोदाम का ताला तोड़ा तो वहां 40 टन से अधिक पीपीएल, डीएपी एवं अन्य ब्रांडों की खाद मौज़ूद थी. इसके अलावा बड़ी मात्रा में कीटनाशक रसायन भी रखा था. जांच के दौरान देश की नामी गिरामी कंपनियों एग्रो, इफ्को, पीपीएल और आईपीएल की सैकड़ों की तादाद में ख़ाली नई बोलियां मिलीं. यहां नक़ली खाद को असली बोरियों में भरकर सिलने वाली तीन सिलाई मशीनें एवं सभी रंग के धागे भी पाए गए. सिटी मजिस्ट्रेट ने तुरंत ही उप संचालक, कृषि अमिताभ तिवारी को इसकी जानकारी दी. थोड़ी देर बाद तिवारी ने पीपीएल के सहायक मंडल प्रबंधक डॉ. ए के शर्मा को बुलाकर जब स्टॉक की जांच कराई तो पता चला कि गोदाम में मौज़ूद सारी खाद नक़ली है. मनीष डालीबाबा स्थित गोदाम में नक़ली खाद को असली बनाने का काम करता था, वहीं उसने घर के भीतर प्रतिबंधित ज़हर की पैकिंग करने की फैक्ट्री भी लगा रखी थी. यहां भी नक़ली खाद के साथ-साथ कीटनाशक रसायनों की मिक्सिंग एवं पैकिंग का पूरा प्लांट मिला.

सूत्रों के अनुसार, मनीष अग्रवाल का यह काला कारोबार कृषि विभाग की शह पर ही चल रहा था. उप संचालक कृषि अमिताभ तिवारी ने स्वीकार किया है कि मनीष अग्रवाल की पत्नी के नाम पर खाद बिक्री का लाइसेंस है और वह उसी के आधार पर अग्रवाल कृषि सेवा केंद्र के ज़रिए खाद बेचता था. पीपीएल के सहायक मंडल प्रबंधक डॉ. ए के शर्मा का कहना है कि पहली ही जांच में पूरा मामला मिलावट का कारोबार प्रमाणित होता है. मनीष अग्रवाल का कहना है कि उसके गोदाम में मिलावट नहीं होती. जो भी ख़ाली बोरियां बरामद हुई हैं, वे उसकी नहीं हैं. सूत्रों का कहना है कि मनीष पिछले दस-बारह वर्षों से नक़ली खाद का व्यापार कर रहा है और उसे राजनीतिक संरक्षण भी प्राप्त है. एक वर्ष पहले अमरपाटन के एक व्यापारी से नक़ली खाद बरामद हुई थी और उसे जेल भेजा गया था. उस मामले में भी मनीष अग्रवाल का भी नाम सामने आया था, लेकिन प्रशासन के कुछ अफसरों ने उसे साफ बचा लिया था.

इस बार डीएम सुखवीर सिंह ने स्वयं कार्रवाई का आदेश दिया और करोड़ों रुपये की नक़ली खाद के साथ-साथ कीटनाशक दवाओं की पैकिंग का भंड़ाफोड़ हुआ, तब भी अधिकारी ठंडे पड़ते नज़र आ रहे हैं. जब मनीष के घर पर छापे की कार्रवाई चल रही थी, तब उसके भाई सुनील ने अधिकारियों पर उंगली उठाते हुए सारा मामला उनकी जानकारी में होने की बात कही थी, लेकिन सिटी मजिस्ट्रेट गंगेले और मीडिया की मौज़ूदगी में अपनी गर्दन फंसते देख कृषि विभाग के अधिकारी सुनील को जबरन वहां से बाहर ले गए और फिर दोबारा उसे अंदर नहीं आने दिया गया.

संध्या पांडे

मध्य प्रदेश पुलिस एवं प्रशासन द्वारा संयुक्त रूप से की गई छापामार कार्रवाई में अधिकारियों ने एक गोदाम और दुकान से न सिर्फ़ एक करोड़ रुपये से अधिक मूल्य की नक़ली खाद बरामद की है, बल्कि नक़ली खाद बनाने के कारखाने का भंडाफोड़ भी किया है. कार्रवाई के दौरान एग्रो, पीपीएल और आईपीएल आदि कंपनियों की नई बोरियां भी बड़ी मात्रा में बरामद की गईं. सतना के खाद व्यापारी मनीष अग्रवाल के इस गोदाम में नक़ली कीटनाशक दवाओं की पैकिंग भी की जाती थी.

ज़िलाधिकारी सुखवीर सिंह को सूचना मिली थी कि खाद व्यापारी मनीष अग्रवाल और उसका भाई सुनील लंबे समय से नक़ली खाद का व्यापार कर रहा है. दोनों भाइयों द्वारा प्रतिबंधित ज़हर सल्फास और अन्य कीटनाशक रसायनों की पैकिंग भी की जाती थी. सुखवीर सिंह ने नगर मजिस्ट्रेट वी.वी. गंगेले को मनीष

feedback@chauthiduniya.com

यह सच था कि तारामती के समूह से जुड़ी औरतों के मुक़ाबले दूसरी जाति की औरतों में भिन्नताएं साफ़-साफ़ दिखती थीं. फिर भी एक बात सारी औरतों को एक साथ जोड़ती थी कि परंपराओं के लिहाज़ से सबको मानमर्यादा का ख्याल रखना है.

जाति की जड़ों को काटती औरतें

शिरीष खरे

देश में कुल आबादी का एक-चौथाई हिस्सा दलितों और आदिवासियों का है, मगर उनके पास खेती लायक़ ज़मीन का महज़ 17.9 प्रतिशत हिस्सा है. इसी तरह कुल आबादी में क़रीब आधी हिस्सेदारी औरतों की है, जो कुल मेहनत में बड़ी हिस्सेदारी निभाती हैं और उन्हें कुल आमदनी का 10वां हिस्सा मिलता है. ऐसे में दलित और उस पर भी एक औरत होने की स्थिति को आसानी से समझा जा सकता है. लेकिन, मराठवाड़ा की दलित औरतें धीरे-धीरे जाति की जड़ों को काटकर और पथरीली ज़मीनों पर फ़सल उगाकर अपना दर्ज़ा ख़ुद तय कर रही हैं.

उस्मानाबाद ज़िले में अनुसूचित जाति की आबादी 15 प्रतिशत से भी ज़्यादा है, मगर 85 प्रतिशत से भी ज़्यादा परिवार अपनी रोजी-रोटी के लिए या तो सवर्णों के खेतों में काम करते हैं या फिर चीनी कारखानों के वास्ते गन्ना काटने के लिए पलायन करते हैं. स्थाई आजीविका न होने से उनके सामने जीने के कई सवाल खड़े रहते हैं. मराठवाड़ा में कुल कितनी ज़मीन से कितना अन्न उगाया है, के हिसाब से किसी आदमी की सामाजिक-आर्थिक स्थितियां बनती-बिगड़ती हैं. तारामती अपने तज़ुर्बे से ऐसी बातें अब ख़ूब जानती हैं,

लड़कियों का बेहिसाब घूमना या किसी ग़ैर से खुलकर बतियाना, कोई अच्छा रंग-ढंग नहीं है. बचपन से हमें यही सुनाया जाता रहा. लेकिन तारामती अब वैसी नहीं रहीं, जैसे पहले थीं. नहीं तो बहुत पहले वह किसी अजनबी को देखते ही जा छिपती थीं रिवाजों की ओट में. यहां औरतों का किसी बाहरी मर्द से बतियाने का कोई सवाल ही नहीं उठता था.

फोटो- प्रभात पाण्डेय

दलित परिवार की तारामती को तो अपने पति को पिटते हुए देखकर भी चुप रहना पड़ता था. गांव के दबंगों से पूरी मज़दूरी मांगने की हिम्मत न उसमें थी, न उसके पति में. ऐसा व्यवहार तो शुरू से ही होता रहा है, सो यह कोई बड़ी बात भी नहीं लगती थी. इसके बावजूद अगर कोई विरोध होता भी था तो मजाल है कि चारदीवारी से बाहर निकल सके . उस पर एक औरत की क्या बिसात कि वह ऐसी बातों पर खुसुर-फुसुर भी कर सके .

छह साल पहले यहां की औरतों को ऐसी ही हालत में पाया जाता था. लोकहित समाज विकास संस्थान के बजरंग टाटे बताते हैं कि काम शुरू करने के बाद हम हर रोज यहां आते-जाते, मगर जो भी बातें निकलकर आतीं, वे सिर्फ़ मर्दों की ही होतीं. हम औरतों में सोचने की आदत के बारे में जानना चाहते थे. तब स्वयं सहायता समूह ने औरतों के विचारों को आपस में जोड़ने के लिए एक कड़ी का काम किया. इस समूह के ज़रिए धीरे-धीरे पता चला कि औरतों के भीतर गुस्सा फूट-फूटकर भरा हुआ है, वे बहुत कुछ बदल देना चाहती हैं. उन्हें अगर खुलेआम बोलने का मौक़ा मिला तो काफी कुछ बदल जाएगा. ज़िला उस्मानाबाद के गांव धोकी से तारामती जैसी दर्ज़नों औरतें धीरे-धीरे ही सही, मगर अपने जैसे सबके भीतर भरे गुस्से से एक होती चली गईं.

वक़्त गुजरा, एक दिन धोकी की औरतों ने चर्चा में पाया कि जब तक ज़मीनों से फ़सल नहीं लेंगे, तब तक रोज-रोज की मज़दूरी के भरोसे ही बैठे रहेंगे. अगले ही दिन उन्होंने गांव से बाहर बंजर पड़ी अपनी ज़मीनों पर खेती करने की हिम्मत जुटा ली. जैसी कि आशंका थी, गांव में दबंगों के अत्याचार बढ़ गए. उन्होंने सोचा कि जो कल तक हमारे गुलाम थे, वे अगर मालिक बने तो उनके खेत कौन जोतेगा? हीरा बारेक उन दिनों को याद करती हैं, पंचायत चलाने वाले ऐसे बड़े लोगों ने मेरे परिवार को ख़ूब धमकियां दीं, मगर अब हम अकेले नहीं थे. संगठन के इतने सारे लोग हमारे साथ थे. इसलिए सबके साथ मैंने आगे आकर ललकारा कि अगर तुम अपनी ताक़त आज़माओगे, मेरे पति को मारोगे, तो हम भी दिखा देंगे कि हम क्या कर सकते हैं?

एक बार दबंगों ने कुछ दलित औरतों को ज़मीनों पर काम करते देखा तो उनके पतियों को बुलवाया और गांव बदर करने जैसी धमकियां भी दीं.

अगली सुबह तारामती और उनकी सहेलियों ने अपने-अपने घरों से निकलते हुए कहा कि मर्द लोगों को डर लगता है तो वे इधर ही रहें, हम तो काम पर जाते हैं. थोड़ी देर बाद बहुत सारे दलित मर्द ज़मीनों पर आए. लगभग पचास लोगों ने वहीं बैठकर फ़ैसला लिया कि वे गांव में समूह बनाकर रहेंगे और खेतों में भी. इसी के बाद स्वयं सहायता समूह की बैठक में औरतों के साथ पहली बार मर्द भी बैठे. इसके पहले तक औरतों का समूह अपनी रोजमर्रा की बातों पर ही केंद्रित रहता था, मगर अब वह गांव के नल से पानी भरने जैसी बातों पर भी गंभीर हो गया. औरतों ने पानी में अपनी हिस्सेदारी के लिए लड़ने का मन बना लिया. ख़ुद को ऊंची जाति का कहने वालों ने सार्वजनिक उपयोग के जिन संसाधनों पर रोक लगाई थी, वह एक-एक करके टूटने लगी.

यह सच था कि तारामती के समूह से जुड़ी औरतों के मुक़ाबले दूसरी जाति की औरतों में भिन्नताएं साफ़-साफ़ दिखती थीं. फिर भी एक बात सारी औरतों को एक साथ जोड़ती थी कि परंपराओं के लिहाज़ से सबको मानमर्यादा का ख्याल रखना है. ऐसे में तारामती और उसके समूह के गांव से बाहर आने-जाने, बार-बार संगठन के दूसरे साथियों से मिलने-जुलने के ऐसे मतलब निकाले गए, जो उनके चरित्र पर हमला करते थे. लेकिन तारामती रुकी नहीं, वह इससे एक क़दम आगे जाकर उप सरपंच का चुनाव भी लड़ी. यह अलग बात है कि वह हार गई, मगर जहां किसी दलित के चुनाव लड़ने को सामान्य ख़बर न माना जाए, वहां एक दलित औरत के मैदान में कूदने की चर्चा तो गर्म होनी ही थी. तारामती, हीरा बारेक एवं संगीता क़स्बे को तो और आगे जाना था, इसलिए यहां पहली बार मर्दों के बराबर मज़दूरी की मांग उठी. इसके पहले उन्हें रोजाना 40 रुपये मज़दूरी मिलती थी, जो मर्दों के मुक़ाबले आधी थी. विरोध के बाद उन्हें रोजाना 65 रुपये मिलने लगे, जो मर्दों से थोड़े ही कम थे.

तारामती के समूह की औरतें पंचायत में जगह से लेकर जायज़ मज़दूरी पाने की जद्दोजहद इसलिए कर सकीं, क्योंकि आजीविका के लिहाज़ से उन्हें अपने खेतों से फ़सल मिलने लगी थी. संगीता क़स्बे बताती हैं कि इससे पहले, वे (सवर्ण) हमें नाम के बजाय जाति से बुलाते थे. मानों जाति न होकर कोई गाली हो. क्या रे मान-क्यों रे महार आदि बोलते थे. अब वे इज़्ज़त से बुलाते हैं, बतियाते हैं. आज तुम काम पर आ सकते हो या नहीं? इस तरह पूछते हैं. सबसे बढ़कर तो यह हुआ कि पंचायत से हमारे काम होने लगे. हम जानने लगे कि सही क्या है, हक़ क्या हैं. हर चीज़ केवल उनके हिसाब से तो नहीं चल सकती है न!

हम जब तारामती के समूह से बतिया रहे थे तो दूर के डोराला गांव से कुछ औरतें भी वहां पहुंचीं. वे भी अपने यहां स्वयं सहायता समूह बनाना चाहती थीं. उसी समय पता चला कि औरतों का समूह ज़रूरत पड़ने पर मर्दों को भी क़र्ज़ देता है. इस समूह में बच्चों की पढ़ाई और किसी अनहोनी से निपटने को वरीयता दी जाती है. पांडुरंग निवरुति ने बताया कि आसपास ऐसे 16 महिला घट बनाए गए हैं. हर घट में कम से कम 10 औरतें रहती हैं.

तारामती कहती हैं कि अगर हम ऐसे ही बैठे रहते तो जो थोड़ा बहुत पाया है, वह भी हाथ नहीं लगता. ऐसा भी नहीं है कि हमारी हालत बहुत सुधर गई है, अभी भी काफी कुछ करना है. यह सच है कि यहां काफी कुछ नहीं बदला है, फिर भी कम से कम इन औरतों की दुनिया बेबसी के परंपरागत चंगुल और उसके बीच उलझी निर्भरता से किनारा पा चुकी है. वे अब अपने बच्चों को स्कूल भेजकर बेहतर सपना देख सकती हैं. माया शिंदे की यह कविता यहां की ज़िंदगी में आ रहे बदलाव को बयान करने के लिए काफी है- मुझे अपना हक़ पता है, फिर कैसे किसी को अपना कुछ भी यूं ही निगलने दूं? हो जाल कितना भी घना, कितना भी शातिर हो बहेलिया, अंत तक लड़ता है चूहा भी, उड़ना नहीं भूलती है कोई चिड़िया कभी.

ज़रूरी है आजीविका का स्थाई साधन

चाइल्ड राइट्स एंड यू और लोकहित सामाजिक विकास संस्था ने यहां की ज़मीनों को आजीविका का स्थाई साधन माना है. यह दोनों संस्थाएं मानती हैं कि वंचित परिवारों को आजीविका का स्थाई साधन दिए बग़ैर बच्चों के हक़ों को सुरक्षित नहीं रखा जा सकता है. यहां कई परिवार ऐसे हैं, जो गायरन यानी अपनी गाय चराने वाली ज़मीनों पर सालों से जुड़े हैं, फिर भी मालिक नहीं कहलाते. इन दोनों संस्थाओं ने उस्मानाबाद ज़िले के 29 गांवों में जो मुहिम चलाई है, उसका नेतृत्व औरतों के हाथों में है. इसके तहत अब 702 परिवारों की औरतें अपनी ज़मीनों के रास्ते जातिपात से लेकर सभी तरह के भेदभाव मिटा रही हैं. साथ ही पंचायत, स्कूल और बाक़ी जगहों पर भी अपने परिवार की उपस्थिति दर्ज़ करा रही हैं.

मेरी दुनिया....पाकिस्तान का अलादीनी चिराग़...धीर

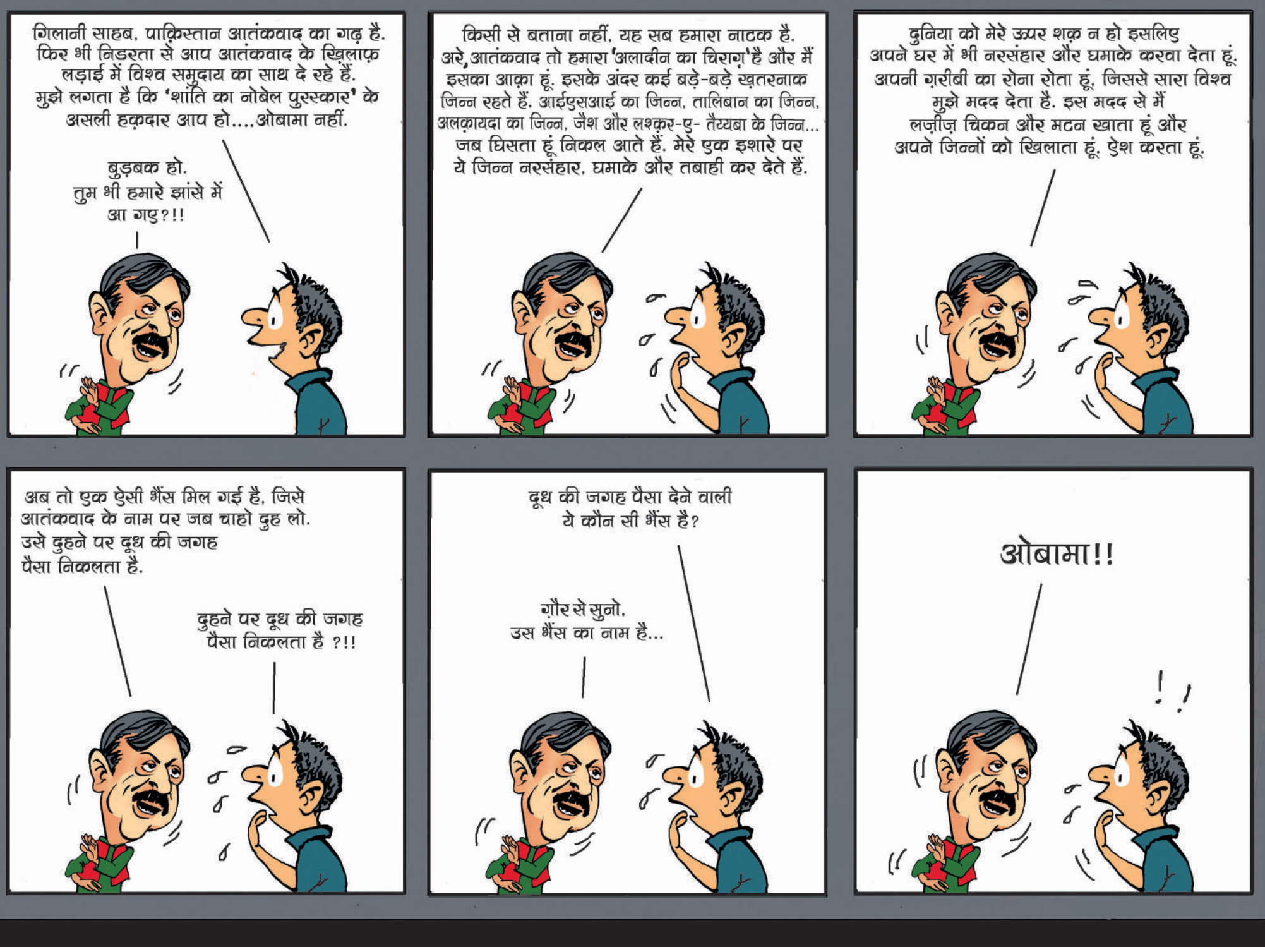

संभव है कि देश के अलग-अलग हिस्सों में इन्हें अलग नामों से जाना जाता हो, लेकिन इन सभी जगहों पर एक समय ये हमारी कृषि, हमारी रसोई और हमारे सांस्कृतिक अनुष्ठानों का अभिन्न हिस्सा रहे हैं.

मोटे अनाज अपनाएं
खेतों से लेकर खाने तक

कांची कोहली

अब इसे अजीब बात ही कहेंगे कि व्यवसायिक नज़रिए से यह स्वीकार कर लिया गया है कि मिलेट्स बेहद स्वस्थ व पौष्टिक आहार हैं और शहरी उपभोक्ताओं को इन्हें ऊंची क़ीमत पर बेचा जा सकता है. वर्षों तक उपेक्षित रहने के बाद मिलेट्स को कृषि अनुसंधान संस्थानों में जगह मिल पा रही है और बड़ी निजी कंपनियां भी इसे अपने एजेंडे में शामिल कर रही हैं

कृषि विज्ञान की पुस्तकों में इसका उल्लेख मोटे अनाज के रूप में किया गया है. हिंदीभाषी लोग भी आम बोलचाल में इसे मोटे अनाज के ही नाम से पुकारते हैं. यह नामकरण मिलेट्स के लिए धब्बा बन चुका है और वर्षों की मशक़्क़त के बाद भी इससे उबरा नहीं जा सका है. इसके विपरीत जैव विविधता वाले किसान, जो मिलेट्स की खेती करते हैं, उनके लिए यह अद्भुत अन्न है या फिर कह सकते हैं कि यह सही मायने में फ़सल है. संभव है, आप में से कई मेरा इशारा समझ रहे होंगे कि मैं क्या कहना चाह रही हूं. लेकिन, मुमकिन है कि आप में से कई उस छोटी सी लड़की की तरह ही हैरान होंगे, जो एक बीज प्रदर्शनी में रंग-बिरंगे बीजों को देखकर अचरज में डूबी थी. उसने अपनी मां से पूछा कि ये कौन से मिलेट्स हैं. यह एक ऐसा सवाल था, जिसका जवाब देना वह सिर्फ़ टाल ही सकती थी.

हम भारतीय कृषि की परंपरा से दूर होते जा रहे हैं. जैव विविधतापूर्ण मिलेट्स आधारित खेती भारतीय परंपरा के मूल में शामिल रही है. वर्ष 1970 के बाद से ही जबसे हरित क्रांति का सपना पूरा हुआ, भारतीय कृषि वैज्ञानिकों और सरकार द्वारा प्रायोजित योजनाओं में गेहूं व चावल को प्रमुखता मिलने लगी. इसके बाद की पूरी पीढ़ी ऐसी है, जिसने अपने घरों और बाज़ारों यहां तक कि अपनी पाठ्य पुस्तकों में भी मिलेट्स को नहीं देखा है. आज भी ये खाद्यान्न देश के कई राज्यों में छोटे पैमाने पर पैदा किए जा रहे हैं, जहां लोग इसे ख़ास स्थानीय नामों से जानते हैं.

आख़िर ये मिलेट्स है क्या चीज़, जिसका मैं बार-बार ज़िक्र कर रही हूं. मिलेट्स के अंतर्गत हम जिन खाद्यान्नों को शामिल करते हैं, उनमें ज्वार, बाजरा, मडुआ, रागी, कंगनी, सावन, कोदो या कुटकी प्रमुख हैं. संभव है कि देश के अलग-अलग हिस्सों में इन्हें अलग नामों से जाना जाता हो, लेकिन इन सभी जगहों पर एक समय ये हमारी कृषि, हमारी रसोई और हमारे सांस्कृतिक अनुष्ठानों का अभिन्न हिस्सा रहे हैं. वे जो मिलेट्स को एक अवधारणा के तौर पर समझते हैं, न कि सिर्फ़ फ़सल के तौर पर, स्पष्ट तौर पर यह स्वीकार करेंगे कि आज भारतीय कृषि किसानों की आत्महत्या और प्रदूषण के कारण मिट्टी के क्षरण जैसी समस्याओं से जूझ रही है. मोटे अनाज भविष्य में हमें इस समस्या से उबार सकते हैं. ऐसा दावे के साथ इसलिए कहा जा सकता है, क्योंकि सालों साल तक मिलेट्स हर समय और हर परिस्थितियों में मनुष्य के लिए भोजन, जल, स्वास्थ्य, पोषण और जीवन की सुरक्षा की गारंटी रहे हैं. ऐसा कैसे हुआ? मिलेट्स की पैदावार ख़राब मिट्टी में भी ली जा सकती है. कम पानी, यहां तक कि बग़ैर पानी के भी इसे उगाया जा सकता है. जलवायु परिवर्तन के साथ भी यह सामंजस्य स्थापित कर लेता है. मिलेट्स के साथ दिलचस्प तथ्य यह है कि इसकी खेती में उर्वरक की ज़रूरत नहीं पड़ती. अन्य बाहरी चीज़ों की ज़रूरत भी कम ही पड़ती है. देश के कई हिस्सों में जहां वर्षा काफी कम होती है, वहां सिंचाई पर निर्भर रहे बग़ैर ही मिलेट्स अपने अस्तित्व की रक्षा कर लेते हैं.

देश के लघु एवं सीमांत किसान हमेशा से इसकी खेती जैव विविधता वाली कृषि भूमि पर करते हैं और प्राय: दलहन व तिलहन की फ़सलों के साथ मिश्रित कर इसकी फ़सल उगाते हैं. खेती के बाद फ़सल के जो अवशिष्ट पदार्थ होते हैं, जैसे कि भूसा आदि, वे मवेशियों के लिए चारे के रूप में इस्तेमाल हो जाते हैं और इस तरह फ़सल चक्र का महत्वपूर्ण हिस्सा बन जाते हैं.

मिश्रित कृषि व्यवस्था की एक प्रमुख विशेषता यह थी कि इसके साथ सुरक्षा की अवधारणा भी जुड़ी होती थी. कई मायनों में यह ग्रामीण परिवारों की आहार सुरक्षा को सुनिश्चित करती थी. अगर एक फ़सल किसी कारण से बर्बाद भी हो जाती थी तो लोग दूसरी फ़सलों के सहारे जी लेते थे. मिश्रित खेती को अपनाने वाले सभी किसान इस बात को भलीभांति जानते थे कि इस तरह की खेती में प्रत्येक फ़सल दूसरी फ़सलों के लिए आवश्यक उपजाऊ मिट्टी और पोषकीय ज़रूरतों को पूरी करती है. आम लोगों का विज्ञान व्यवहार में किस तरह काम करता है, यह इस बात की बेहतर मिसाल है. उत्तराखंड के एक प्रमुख किसान आंदोलन, बीज बचाओ आंदोलन के विजय जरधारी कहते हैं कि 2009 में जब सूखा पड़ा था तो मिलेट्स के सहारे ही उनके गांव की स्थिति को क़ाबू में रखा जा सका था.

वर्षों तक मिलेट्स आधुनिक युग के वैश्विक नज़रिए का कोपभाजन बनते रहे हैं. तकनीकी उन्नति के साथ ही कृषि उत्पादन के प्रति नज़रिया व्यवसायिक हो गया. मिलेट्स की उपेक्षा न सिर्फ़ कृषि से जुड़ी योजनाओं में होती रही, बल्कि लोगों के खाद्यान्न उपभोग की प्रवृत्ति में भी इसके प्रति तिरस्कार का ही भाव दिखा. सत्तर के दशक में हरित क्रांति की शुरुआत के साथ ही मिलेट्स की खेती के प्रति उपेक्षा का दौर भी शुरू हो गया. लोगों के मन में यह बात गहराई से पैठ गई कि भूख का निदान बस दो फ़सलों के उत्पादन को बढ़ाकर किया जा सकता है. एक तो गेहूं और दूसरा चावल. उन्नत बीज, मशीनीकृत सिंचाई और उर्वरक का इस्तेमाल खेती के कार्य में बढ़ा. ज्वार व बाजरा जैसे मोटे अनाजों की खेती उपेक्षा के चलते बिल्कुल हाशिए पर पहुंच गई. नवीं और दसवीं पंचवर्षीय योजनाओं में खाद्यान्न उत्पादन में विभिन्न अनाजों की हिस्सेदारी कितनी है, अगर इस आंकड़े पर आप ग़ौर करें तो पाएंगे कि कुल खाद्यान्न उत्पादन में जहां चावल की हिस्सेदारी 42 प्रतिशत और गेहूं की 35 प्रतिशत है, वहीं मोटे अनाज की हिस्सेदारी महज़ 14 प्रतिशत. वर्षों तक न तो सरकार की जन वितरण प्रणाली में इन उच्च पौष्टिकता वाले अनाज के लिए कोई जगह थी और न ही बाज़ार में. वास्तव में 1966 से लेकर 2006 तक भारत में 44 प्रतिशत ज़मीन, जिस पर कभी मोटे अनाजों की खेती होती थी, उस पर दूसरे अनाज उगाए जाने लगे.

अब इसे अजीब बात ही कहेंगे कि व्यवसायिक नज़रिए से यह स्वीकार कर लिया गया है कि मिलेट्स बेहद स्वस्थ व पौष्टिक आहार हैं और शहरी उपभोक्ताओं को इन्हें ऊंची क़ीमत पर बेचा जा सकता है. वर्षों तक उपेक्षित रहने के बाद मिलेट्स को कृषि अनुसंधान संस्थानों में जगह मिल पा रही है और बड़ी निजी कंपनियां भी इसे अपने एजेंडे में शामिल कर रही हैं. यह सच है कि वर्षों तक यह खाद्यान्न हमारी उपेक्षा का शिकार रहा और भोजन, कृषि और सरकारी योजनाओं तक में हाशिए पर रहा. लेकिन चिकित्सक और पोषाहार विशेषज्ञों द्वारा मधुमेह के रोगियों के के लिए इस आहार को सही ठहराए जाने के बाद से बड़ा बदलाव आया है. आज स्थिति यह है कि हर बड़े शहरों में काफी संख्या में पौष्टिक आहार की आधुनिक दुकानें खोली जा रही हैं, वहां मिलेट्स और उन पर आधारित हेल्थफूड उत्पाद बेचे जा रहे हैं. शहरी उपभोक्ताओं के बीच ये उत्पाद खूब लोकप्रिय भी हैं. इतने कि मिलेट्स के लिए अब नई पदावली इस्तेमाल की जा रही है- न्यूट्रास्यूटिकल्स.

लेकिन इतना सब कुछ हुआ भी तो उसमें क़ीमत ज़्यादा महत्वपूर्ण है और इस क़ीमत के साथ भी दो बातें जुड़ी हैं. पहली और सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि ज्वार व बाजरा जैसे मोटे अनाजों को ग़रीबों का भोजन माना जाता है और इसे जिस क़ीमत पर बेचा जाता है, उसे ख़रीद पाना सिर्फ़ अमीरों के बूते की ही बात है. दूसरी बात यह कि बड़ी निजी कंपनियां, जिन्हें मिलेट्स के उत्पादन में भारी मुनाफ़ा नज़र आ रहा है, आज कई-कई एकड़ ज़मीन पर मोटा अनाज कही जाने वाली किसी एक फ़सल की खेती कर रही हैं. ऐसा वे मूलत: सीलबंद अन्न और उत्पाद के रूप में इसे बाज़ार में उतारने के उद्देश्य से कर रही हैं. साथ ही साथ बायोडीज़ल के उत्पादन में भी मिलेट्स के इस्तेमाल की संभावना को ध्यान में रखा जा रहा है. देश और विदेशों में भी इस पर शोध किए जा रहे हैं. हक़ीक़त यह है कि कुछ प्रचलित मिलेट्स की उत्पादकता को बढ़ाने के लिए अनुवांशिक सुधार पर भी शोध किए जा रहे हैं. कह सकते हैं कि मिलेट्स खाद्यान्न से ईंधन अन्न का स्थान लेने जा रहे हैं.

मिलेट्स की खेती दरअसल कृषि जैव विविध परिस्थितिकी को दर्शाता है. इसे नेचुरल फार्मिंग के साथ गिव एंड टेक की स्वाभाविक प्रक्रिया मान सकते हैं. ऐसा तभी होता है, जब एक फ़सलीय खेती न की जा रही हो. जहां तक मिलेट्स की खेती की बात है तो इसे नज़रअंदाज़ ही किया जा रहा है. ऐसे में एक ओर तो मिलेट्स को बाज़ार में अहम स्थान मिल रहा है, वहीं जो वास्तविक किसान हैं, वे इसके फ़ायदे से वंचित हो रहे हैं. सारा फ़ायदा कुछ निजी कंपनियों के हाथों में सिमट रहा है. किसान एक बार फिर बीज़ और दूसरी चीज़ों के लिए बाज़ार पर आश्रित रहने को विवश हैं. वक़्त की मांग है कि हम मिलेट्स के साथ फिर से जुड़ें...हम न सिर्फ़ इसकी खेती को प्रोत्साहित करें, बल्कि हमारे खाने की प्लेटों में भी इसे प्रमुख स्थान मिले.

लेखिका कल्पवृक्ष एनवायरमेंटल एक्शन ग्रुप की सदस्या हैं.

feedback@chauthiduniya.com

महानायकों की चूक

एम जे अकबर

गांधी ने हमें आज़ादी दी, नेहरु ने हमारी स्वतंत्रता की रक्षा की और इंदिरा गांधी ने देश को सुरक्षित रखा. यह एक ऐसी सच्चाई है, जिसे किसी प्रमाण की ज़रूरत नहीं है. एक नेता महज़ पद की शोभा बढ़ाने के विपरीत तत्कालीन चुनौतियों और अगली पीढ़ी से अपने वादे निभाने की क्षमता से लैस होता है. गांधी, नेहरु और इंदिरा ऐसे ही नेता थे, हालांकि इनमें सभी इतिहास के विभिन्न पन्नों पर सफलता और असफलता दोनों से जुड़े हैं. गांधी का व्यक्तित्व विवादों से सुरक्षित है, लेकिन उन्नति का झुकाव हमेशा उसकी सफलता की ओर होता है. जैसा कि जवाहर लाल ने देखा कि गांधी ने भारतीयों को भय से मुक्त किया और इसी का नतीजा था कि भारतीय अंग्रेजों से आज़ाद हुए. निश्चित तौर पर गांधी की सबसे बड़ी असफलता यह थी कि वह अपने मूल्यों द्वारा भारतीयों को हिंसा से आज़ादी नहीं दिला सके.

क्या गांधी ने नैतिक और सामरिक रूप से अहिंसा पर ज़ोर दिया? यह सही है कि वह अपने सिद्धांतों के प्रति समर्पित थे, लेकिन क्या उन्होंने यह संदेह भी जताया कि हिंसक लोगों को अपनी रक्षा के लिए अहिंसा का रास्ता अपनाने की ज़रूरत है?

> **भुट्टो के उत्तराधिकारी ज़िया-उल-हक़ ने बांग्लादेश का बदला पंजाब में विद्रोह भड़का कर लिया, जो 1984 में अपने चरम पर पहुंच चुका था. इसकी वजह से ही स्वर्ण मंदिर ढहा और इंदिरा गांधी की हत्या हुई. उसके बाद सिखों का भयावह नरसंहार हुआ. ज़िया-उल-हक़ किसी भी तरह भारत को विभाजित तो नहीं कर सके, लेकिन उन्होंने भारत के दिल में एक ज़ख्म ज़रूर छोड़ दिया.**

क्या उनका यह भी मानना था कि शस्त्रों से लैस भारतीय अपने वास्तविक दुश्मनों की पहचान किए बग़ैर ही, जाति और मज़हब के नाम पर एक-दूसरे को तहस-नहस कर देंगे? यहां अस्पृश्यता को घातक और मौन हिंसा के रूप में सबसे बेहतर तरीक़े से परिभाषित किया गया है. गांधी ने अपना जीवन बंदूक़ से ही खोया. वह इस हिंसा को ख़त्म नहीं कर सके, लेकिन उनकी मौत ने गृहयुद्ध की ओर अग्रसर भारत को इससे बचा लिया.

नेहरु ने अपने कुछ उत्तराधिकारियों की अपेक्षा यह बेहतर तरीक़े से समझा कि आज़ादी, स्वतंत्रता का पर्याय नहीं थी. आख़िरकार स्वतंत्रता नव उपनिवेशवाद की शर्त पर जो मिली थी. अंग्रेज़ों के समय का भारत उपनिवेश और नव उपनिवेश दोनों था. बाद में यह एक उदार राज्य बना. नेहरु ने अपने चारों ओर देखा कि उत्तर उपनिवेशवादी दुनिया किस तरह वाशिंगटन और मॉस्को की शरणस्थली में जा रही थी. उनका मानना था कि भारत की तक़दीर की तलाश कभी-कभी मिलने वाले लॉलीपॉप की अपेक्षा कहीं अधिक ठोस और बेहतर है. भारत की सफलता को आउटसोर्स नहीं किया जा सकता है, यहां तक कि इसके शुभचिंतकों के लिए भी नहीं. किसी महाशक्ति को गृहयुद्ध में ख़ुद अपने सहयोगी की खोज करनी चाहिए. और, उन्हें आत्मनिर्भरता के लिए पाकिस्तान से आगे देखने की ज़रूरत नहीं पड़ी.

जब नेहरु ने पहली दुनिया पर अविश्वास और तीसरी दुनिया पर भरोसा किया तो उन्हें निराशा मिली. उनकी सबसे बड़ी ग़लती थी, उनका आकलन या ग़लत आकलन कि चीन इस दुनिया में उनका साझीदार होगा. उन्होंने ख़ुद के साथ-साथ दूसरों को भी भ्रम में रखा और चीन ने शांति के प्रति उनकी प्रतिबद्धता की खिल्ली उड़ाई. विश्वास तो अक्सर भोलापन ही होता है.

नेहरु के पीड़ादायक आदर्शवाद के बाद भारत ने इंदिरा गांधी के यथार्थवाद का स्वागत किया. 1964 और 1984 के बीच दो दशक तक वह कैबिनेट मंत्री और प्रधानमंत्री रहीं. इन दो दशकों ने सांप्रदायिक, भाषाई, साम्यवादी, अलगाववादी और कई तरह की असंख्य जटिलता भरे हिंसक युग को जन्म दिया. दक्षिण भारत में भाषाई दंगे, हदें पार करने वाले हिंदू-मुस्लिम संघर्ष, नक्सली समस्याओं, कट्टरपंथी ट्रेड यूनियनों, पाकिस्तान के साथ युद्ध, आपातकाल, प्रधानमंत्री के रूप में उनका दूसरा कार्यकाल, असम में हलचल, पूर्वोतर में धमाके और पंजाब में बढ़ते विद्रोह के समय उनका नेतृत्व करिश्माई था. श्रीमती गांधी की भाग्य रेखाओं में शांति की लकीरें नहीं लिखी थीं. क्या बांग्लादेश उनका चरम उत्कर्ष था और आपातकाल उनका पतन?

यदि आपातकाल अधिक समय तक चलता तो भारत भी अफ़्रीका और एशिया में कई उत्तर उपनिवेशवादी तानाशाहों की राह पकड़ चुका होता, जिसे कुछ स्वार्थी और चापलूस क़िस्म के लोगों द्वारा देशहित में बताया गया था. उनके कुछ क़रीबी सलाहकारों का मानना था कि इसे कम से कम 20 सालों तक चलना चाहिए.

सरकार विपक्ष को जेल में डालकर और प्रेस पर अंकुश लगाकर शुरुआती ख़तरे से बच गई थी. व्यक्ति और संस्थाओं ने धीरे-धीरे अर्द्ध तानाशाही की मदद करनी शुरू कर दी थी, लेकिन जब लोकतंत्र की बहाली की उम्मीदें जगीं तो एक शख्स ने यह महसूस किया कि बग़ैर बहुमत के कोई भी सरकार अवैध है. वह शख्स थीं, श्रीमती गांधी. जब जनवरी 1977 में उन्होंने आम चुनावों की घोषणा की तो इससे न सिर्फ़ उनके दोस्त हैरान हुए, बल्कि उनके इस क़दम ने उनके दुश्मनों को भी चौंका दिया. इन चुनावों में जब कांग्रेस का सफ़ाया हुआ तो वह ख़ुद आश्चर्यचकित थीं. उसके बाद लोकतंत्र को कभी दोबारा चुनौती नहीं मिली.

यह बेहद अजीब है कि एक नेत्री, जिसने 1971 के युद्ध में अपनी कुशलता का परिचय दिया, उसे शांति प्रक्रिया की बहाली के लिए अपनी भूमिका साबित करनी चाहिए. इसे आप किसी भी नज़रिए से देखने के लिए स्वतंत्र हैं. 1972 का शिमला समझौता एक अवसर था, जिसे हमने भुला दिया. 1948 के शीतयुद्ध की सीमा रेखा को स्थायी सीमा में बदल दिया गया. इसी तरह 1966 में भारत और पाकिस्तान ने ताशकंद समझौते पर हस्ताक्षर किए कि वे दोनों इन नियंत्रण रेखाओं का सम्मान करेंगे.

श्रीमती गांधी ने 1972 में हर तरह से जीत दर्ज़ की और ज़ुल्फ़िक़ार भुट्टो का विश्वास खो दिया. भुट्टो के उत्तराधिकारी ज़िया-उल-हक़ ने बांग्लादेश का बदला पंजाब में विद्रोह भड़का कर लिया, जो 1984 में अपने चरम पर पहुंच चुका था. इसकी वजह से ही स्वर्ण मंदिर ढहा और इंदिरा गांधी की हत्या हुई. उसके बाद सिखों का भयावह नरसंहार हुआ. ज़िया-उल-हक़ किसी भी तरह भारत को विभाजित तो नहीं कर सके, लेकिन उन्होंने भारत के दिल में एक ज़ख्म ज़रूर छोड़ दिया.

श्रीमती गांधी की शहादत ने उनकी ग़लतियों को लोगों की स्मृतियों से मिटा दिया, लेकिन सिर्फ़ महानायक ही बड़ी ग़लतियां करते हैं.

feedback@chauthiduniya.com

जनता का विश्वास बरकरार रखना ज़रूरी

रवि किशोर

उच्चतम न्यायालय में न्यायाधीश पी डी दिनाकरन की पदोन्नति से जुड़े विवाद ने दो बातों की ओर हमारा ध्यान खींचा है. पहली यह कि इसने उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों की नियुक्ति के मसले को हमारे सामने रखा. दूसरी बात, यह विवाद न्यायपालिका में सुधार की ज़रूरतों पर बल देता है. उच्चतम न्यायालय में दिनाकरन की पदोन्नति की सिफ़ारिश यहीं के ही कॉलेजियम ने की थी, लेकिन कॉलेजियम की इस सिफ़ारिश का वरिष्ठ वकीलों ने विरोध किया और इस मसले को लेकर वकीलों के एक प्रतिनिधिमंडल ने भारत के मुख्य न्यायाधीश और क़ानून मंत्री को एक आवेदन पत्र भी सौंपा. इस आवेदन पत्र में शांति भूषण और फाली एस नरीमन जैसे कई वरिष्ठ क़ानूनविदों के हस्ताक्षर थे. आवेदन में दिनाकरन पर यह आरोप लगाया गया है कि उनके पास अकूत संपत्ति है. साथ ही दिनाकरन ने खनन संबंधी जिन सभी मामलों को धारवार सर्किट खंडपीठ से बेंगलुरु स्थानांतरित किया था, उन पर भी संदेह ज़ाहिर होता है.

यह पूरा प्रकरण एक बड़े विवाद में तब बदल गया, जब सुप्रीमकोर्ट और दिल्ली हाईकोर्ट बार एसोसिएशन ने दिनाकरन की पदोन्नति के साथ-साथ उनके न्यायाधीश बने रहने पर भी सवाल खड़े कर दिए. केंद्रीय क़ानून मंत्री वीरप्पा मोइली को दिए ज्ञापन में एसोसिएशन ने कहा कि उसे दिनाकरन की पदोन्नति और उनके न्यायाधीश पद पर बने रहने पर भी आपत्ति है. यह रिपोर्ट मीडिया में काफ़ी चर्चा का विषय बनी रही. तमिलनाडु के तिरूवल्लूर ज़िले के कलेक्टर को सौंपी गई रिपोर्ट से यह साफ़ है कि दिनाकरन न सिर्फ़ न्यायिक चूक, बल्कि आपराधिक क़ानून व भ्रष्टाचार निरोधक अधिनियम 1947 के तहत भी कई मामलों के दोषी हैं. इस लिहाज़ से दिनाकरन का न्यायिक पद पर बने रहना संपूर्ण न्यायिक प्रणाली के लिए एक ख़तरा है. उच्चतम न्यायालय द्वारा न्यायाधीश वी रामास्वामी के मामले का अनुपालन किया जाना चाहिए और जस्टिस दिनाकरन को काम करने की अनुमति नहीं देनी चाहिए.

आमतौर पर यह सभी मानते हैं कि जब कोई वरिष्ठ या कनिष्ठ अधिकारी किसी अपराध में दोषी पाया जाता है तो प्रशासन और पुलिस उसके ख़िलाफ़ क़ानूनी जांच और मुक़दमे की प्रक्रिया शुरू करती है. उच्चतम न्यायालय ने न्यायपालिका की आज़ादी की रक्षा के लिए भारत के मुख्य न्यायाधीश को अधिकार दिया है कि वह उच्च न्यायाधीशों के विरुद्ध क़ानूनी जांच और प्राथमिकी दर्ज़ करने की मंज़ूरी दे सकते हैं. जैसा कि वी रामास्वामी बनाम भारत सरकार के मामले में देखा गया. न्यायिक स्वतंत्रता के उच्च सिद्धांतों के मद्देनज़र उच्चतम न्यायालय एक सर्वोच्च न्यायिक मंच होने के नाते दिनाकरन के विरुद्ध आपराधिक जांच और जवाबी कार्रवाई का आदेश दे सकता है.

दरअसल, सारे विवाद की जड़ उच्च और उच्चतम न्यायालयों में न्यायाधीशों की नियुक्ति की प्रक्रिया है. हालांकि पिछले कई वर्षों से बड़ी अदालतों में न्यायाधीशों की चयन प्रक्रिया में व्यापक बदलाव हुए हैं, लेकिन विवाद जस के तस बने हुए हैं. यहां तक कि संविधान सभा के सदस्यों में भी नियुक्ति के मसलों को लेकर कई वैचारिक मतभेद हैं. जबकि संविधान निर्माताओं ने तीनों अंगों न्यायपालिका, विधायिका व कार्यपालिका के बीच एक संतुलित और व्यवस्थित प्रणाली बनाई थी. अंतत: काफी विचार-विमर्श और बहस के बाद संविधान सभा के सदस्यों के बीच एक राय बनी, जिसे भारतीय संविधान के अनुच्छेद 124 (2) में कुछ इस तरह परिभाषित किया गया है, सुप्रीमकोर्ट के प्रत्येक न्यायाधीश की नियुक्ति राष्ट्रपति के हाथों से अधिपत्र और मुहर के साथ होगी. यदि राष्ट्रपति इसके लिए ज़रूरी समझें तो नियुक्ति के मसले पर उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों और राज्यों के उच्च न्यायालयों से भी परामर्श ले सकते हैं. न्यायाधीश 65 वर्ष की उम्र तक अपने पद पर बने रह सकते हैं.

इस अनुच्छेद के मुताबिक़, मुख्य न्यायाधीश के अलावा अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति में हमेशा मुख्य न्यायाधीश से परामर्श लिया जाएगा. यह प्रक्रिया अपने मूल रूप में 1993 तक प्रभावी रही, लेकिन एडवोकेट ऑन रिकॉर्ड मामले पर जब सुप्रीमकोर्ट ने परामर्श के बाद की व्याख्या कोर्ट की सहमति है के तौर पर की, तब तत्कालीन सरकार इस फ़ैसले पर अड़ गई कि किसी भी निर्णय पर सुप्रीमकोर्ट की बड़ी बेंच से निर्णय की समीक्षा नहीं मांगी जाएगी. सरकार के इस फ़ैसले के बाद तो सुप्रीमकोर्ट और प्रशासकीय अधिकारी पूरी तरह से हाशिए पर चले गए. फिर उनकी तरफ़ से नियुक्ति के मसलों पर कोई टिप्पणी नहीं आई. तभी से न्यायाधीशों की नियुक्तियों से संबंधित फ़ैसले ख़ुद न्यायाधीशों द्वारा ही निर्धारित होने लगे. यह प्रक्रिया आज तक जारी है. हालांकि इस फ़ैसले के आने से पहले और बाद में भी क़ानून आयोग और बार काउंसिल कई सिफ़ारिशें देता रहा है, जिसमें राष्ट्रीय न्यायिक सेवा आयोग की स्थापना की सिफ़ारिश भी शामिल है.

इससे पहले सुप्रीमकोर्ट ने एस पी गुप्ता मामले में सात न्यायाधीशों के बहुमत वाले निर्णय से प्रशासकीय अधिकारियों की नियुक्ति से जुड़े अधिकारों को अपने पास रखने की पुष्टि की थी. साथ ही न्यायाधीशों की नियुक्तियों के दौरान अनुच्छेद 124 (2), 217 के तहत परामर्श शब्द की व्याख्या, सहमति के रूप में होने की भी पुष्टि की. उच्चतम न्यायालय का कहना था कि मुख्य न्यायाधीश भले इस मसले पर अलग राय रखते हों, लेकिन प्रशासकीय अधिकारियों को न्यायाधीशों की नियुक्ति का अधिकार है. न्यायमूर्ति भगवती ने बहुमत निर्णय के आधार पर अपने सहयोगी न्यायाधीशों से कहा कि परामर्श का मतलब है कि न्यायाधीशों की नियुक्ति के मसले पर मुख्य न्यायाधीश कॉलेजियम को अपनी सलाह देंगे. हालांकि संविधान में कॉलेजियम को परिभाषित नहीं किया गया है.

सुप्रीमकोर्ट एडवोकेट ऑन रिकॉर्ड बनाम भारत सरकार मामले में यह बिंदु एक बार फिर सुप्रीमकोर्ट के सामने आया. इस बार कोर्ट ने नियुक्ति के मसले पर न्यायपालिका की सर्वोच्चता स्थापित करते हुए गुप्ता मामले के निर्णय को पूरी तरह ख़ारिज़ कर दिया.

इसी क्रम में तत्कालीन राष्ट्रपति के आर नारायणन ने 1998 में अनुच्छेद 143 के संदर्भ में सुप्रीमकोर्ट से न्यायाधीशों की नियुक्ति के बाबत स्पष्टीकरण मांगा था. सामान्यत: इस अनुच्छेद के तहत सलाहकार सरकार के प्रति जवाबदेही के लिए बाध्य नहीं हैं, लेकिन तत्कालीन एटार्नी जनरल ने एक आदेश में कहा कि सरकार उच्चतम न्यायालय के फ़ैसले का पालन करेगी. उसके बाद भारत के मुख्य न्यायाधीश ने नौ न्यायाधीशों की एक पीठ गठित की. इस पीठ ने सर्वसम्मति से यह राय दी कि सुप्रीमकोर्ट और हाईकोर्ट में न्यायाधीशों की नियुक्ति में इसी प्रक्रिया का अनुसरण किया जाए. कोर्ट के अनुसार मुख्य न्यायाधीश को दिए जाने वाले सभी परामर्श लिखित रूप में हों और मुख्य न्यायाधीश को अपने विचारों से सरकार को अवगत भी कराना चाहिए.

हाल ही में यह प्रक्रिया कई अवसरों पर सवालों के घेरे में आई. इधर जनता का दिनाकरन मामले पर रोना-चिल्लाना जारी है. हालांकि कुछ छिटपुट घटनाओं को छोड़ दें तो आज भी जनता का न्यायपालिका में गहरा विश्वास है. लेकिन इस मुद्दे पर प्रशासन का जो रवैया रहा है, उससे तो यह पूरा मामला ही धुंधलाता जा रहा है. साथ ही इसकी निष्पक्षता भी ख़त्म होती जा रही है. इस मसले पर न्यायपालिका और बार एसोसिएशन के सदस्यों के अलावा अन्य लोगों की भी राय ली जानी चाहिए. इस पूरे मसले पर कार्यपालिका को भी अपनी राय देने की ज़रूरत है. यद्यपि मुख्य न्यायाधीश का फ़ैसला ही सर्वमान्य है, लेकिन उन्हें भी इन मामलों में सुप्रसिद्ध न्यायविदों, कानूनी जानकारों, सांसदों और बार एसोसिएशन के प्रतिनिधियों से विचार-विमर्श की बेहद ज़रूरत है. यह मुमकिन है कि कार्यपालिका से निष्पक्ष प्रतिक्रिया मिलने के फलस्वरूप कॉलेजियम की अवधारणा में विस्तार की आवश्यकता महसूस हो. इसमें प्रतिनिधियों की सलाह भी शामिल करनी चाहिए. आज हमें एक निष्पक्ष व्यवस्था की आवश्यकता है, अन्यथा न्यायपालिका से जनता का विश्वास ही उठ जाएगा और यह देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था के हित में कतई नहीं है. सरकार को इस मुद्दे को गहराई से समझने और इस मसले पर तेज़ी से कार्रवाई करने की ज़रूरत है.

(लेखक सुप्रीम कोर्ट के वकील हैं)

feedback@chauthiduniya.com

शिक्षा नीति और हम

26 अक्टूबर के अंक में प्रकाशित लेख-शिक्षा की बदहाली का ज़िम्मेदार कौन?, ने एक गंभीर विषय पर रोशनी डालने का प्रयास किया है. निश्चित रूप से एक वर्ग विशेष, जो कि संपन्न और ताक़तवर है, ने हमारी शिक्षा व्यवस्था को कभी कामयाबी की ओर बढ़ने ही नहीं दिया. दोहरी शिक्षा पद्धति से उपजी तमाम परेशानियां अक्सर हमें चिंतित करती हैं.

शिवगोपाल कटियार, कानपुर, उत्तर प्रदेश.

लेखक को बधाई

आवरण कथा- विंध्य की अवैध खदानें बनीं मौत का कुआं पढ़ी. अच्छा लगा कि ऐसे अहम मसले पर लेखक ने अपनी कलम चलाई. लेकिन जब तक इन क्षेत्रों में शिक्षा का प्रचार-प्रसार नहीं होगा, रोजगार के अन्य सुरक्षित साधन नहीं पैदा किए जाएंगे, तब तक अज्ञानता और मजबूरीवश लोग यूं ही अपनी जान गंवाते रहेंगे. शासन और स्थानीय प्रशासन चाहे तो बहुत कुछ अच्छा हो सकता है. लेकिन जब चेते, तब न!

कुमार प्रभाकर, जमशेदपुर, झारखंड.

ख़तरे की घंटी

26 अक्टूबर-01 नवंबर के अंक में अपनी संपादकीय में आपने सही कहा है कि ख़तरे की घंटी हिंदुस्तान में भी बज रही है और पाकिस्तान में भी. लेकिन, समझ में किसके आ रहा है? असल सवाल तो यही है. जिम्मेदार लोग यहां भी सो रहे हैं और वहां भी. पता नहीं, यह कुंभकर्णी नींद कब टूटेगी? जल्दी टूट जाए तो अच्छा है, वरना देर हो जाने पर बहुत सी चीजें हाथ से निकल जाती हैं.

अभिषेक त्यागी, नई दिल्ली.

इतना ही काफी नहीं

निर्दोष युवक रणवीर का एनकाउंटर करने वाले पुलिसकर्मी जेल चले गए, यह अच्छी बात है. लेकिन जब तक पुलिस की मनमानी और तानाशाही के लिए दोषियों को सख्त से सख्त सज़ा न मिले, उस बेकसूर युवक की आत्मा को शांति नहीं मिलेगी और न ही अपना बेटा-भाई खोने वाले परिवार के साथ न्याय हो सकेगा. यह कांड देवभूमि के माथे पर एक कलंक जैसा है, इसे धोया जाना बहुत ज़रूरी है.

संदीप अग्रवाल, हरिद्वार, उत्तराखंड.

रक्सौल की बदहाली

क्लिंकर की धूल से बीमार होता शहर रक्सौल रिपोर्ट पढ़ी. ऐसा नहीं है कि इस स्थिति से प्रशासन अंजान है, लेकिन शायद वह कुछ करना नहीं चाहता. हो सकता है कि इसमें उसकी कोई मजबूरी हो, क्योंकि सीमेंट निर्माण से जुड़े लोग ताक़तवर और पहुंच वाले होते हैं. स्थानीय नागरिक तरह-तरह की बीमारियों के शिकार हो रहे हैं. अगर ऐसा ही चलता रहा तो एक दिन रक्सौल में हर आदमी मरीज़ हो जाएगा.

शिवमोहन ओझा, छपरा, बिहार.

पाठक अपने विचार और सुझाव हमें इस पते पर भेज सकते हैं- संपादक, चौथी दुनिया, एफ-2, सेक्टर - 11 नोएडा (उत्तर प्रदेश) पिन-201301
ई-मेल पता : feedback@chauthiduniya.com

जब तोप मुक़ाबिल हो

सिर्फ़ इंदिरा नहीं, उनके जमाने को भी याद कीजिए

संतोष भारतीय

कान से सुनने और आंख से देखने की ज़रूरत है. सिर्फ़ इंदिरा गांधी को याद करने से काम नहीं चलने वाला. इंदिरा गांधी से पहले का जमाना, जो उनके पिता जवाहर लाल नेहरु का था, या महात्मा गांधी का था, याद किया जाना चाहिए. भारत की सरकार और राज करने वाली पार्टी चाहे इसे मेरी सलाह माने, चाहे तो हमारा निवेदन, क्योंकि आज तो उसके पास भागते वक़्त के कुछ पल भी बचे हैं जिनका इस्तेमाल कर वह लोकतांत्रिक इतिहास में अपना नाम अच्छी सरकार के रूप में लिखवा सकती है. शायद कल इसके लिए उसके पास न समय बचे और न ही अवसर.

राज्य नाम की संस्था चलाने वाले जब ज़्यादा अच्छे काम करते हैं और कुछ बुरे तो उन्हें अच्छे शासक के रूप में जाना जाता है और जब बुरे काम ज़्यादा करते हैं और अच्छे कम तो उन्हें सामान्य और बदलने योग्य शासक माना जाता है. पर दोनों ही में एक समानता है, उनमें सुनने की समझ होनी चाहिए. चाहे थोड़े लोग हों या ज़्यादा, अगर वे किसी सार्वजनिक समस्या से पीड़ित हैं तो उनकी तक़लीफ़ों को सुनने की ज़िम्मेदारी शासकों की बनती है, क्योंकि उन्हीं के शासन की वजह से ये तक़लीफ़ें पैदा हुई हैं.

शासन की जो नई शैली विकसित हुई है, वह है समस्याओं को अनदेखा करने, और उन्हें उठाने वाली आवाज़ों को अनसुना करने की. इस शैली के मानने वाले लगभग सारे राजनैतिक दल हैं, क्योंकि सभी पिछले दस सालों में केंद्र की सत्ता में कभी न कभी हिस्सेदार रहे हैं, और आज भी कहीं न कहीं किसी राज्य में सत्तारूढ़ हैं.

गांधी के समय हिंदुस्तान में गुलामी से पैदा हुई समस्याओं को लेकर आवाज़ें उठीं, पहले अंग्रेज़ों ने अनसुना किया पर बाद में उन्हें सुना, जिसकी वजह से देश में अराजकता की स्थिति नहीं बनीं या कम बनीं. पर अंग्रेज़ों के जाने के बाद अट्ठारह-बीस साल बीतते-बीतते लोगों की तक़लीफ़ों को अनसुना-अनदेखा करने की आदत बढ़ने लगी. आज हालत यह है कि ग़रीब राजनैतिक शब्दावली का केंद्र बिंदु रहा ही नहीं, पहले कम से कम उसका नाम तो लिया जाता था. आज नाम छोड़ दीजिए, वह दिमाग़ में ही नहीं है. सरकारें चाहे प्रदेशों की हों या केंद्र की, चाहे राज भाजपा कर रही हो या माकपा, केंद्र का पुराना गठबंधन रहा हो या नया, जो आज राज कर रहा है, ग़रीबों, अल्पसंख्यकों, वंचितों, आदिवासियों, भूमिहीनों, किसानों और महिलाओं की तक़लीफ़ों को सुनना ही नहीं चाहता.

ये तबके साधन विहीन हैं. अपनी बात उठाते हैं पर सरकारें इनकी बात नहीं सुन रहीं. अक्टूबर की तीस इकत्तीस और नवंबर की पहली तारीख़ को पांच हज़ार ग़रीब, भूमिहीन आदिवासी और उम्र से वरिष्ठ नागरिक कहे जाने वाले लोग सड़कों पर अपनी तक़लीफ़ें बताने मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ सहित कई प्रदेशों से दिल्ली में आए. दिन रात बैठे पर सरकार ने उनकी बातें नहीं सुनीं. सरकार के पास आज वक़्त ही नहीं है. ये लोग दो साल पहले भी पच्चीस हज़ार की संख्या में आए थे, सात दिनों तक ग्वालियर से दिल्ली तक पैदल चले थे, ग्यारह से ज़्यादा मौतें रास्ते में ही बीमारी से या भूख से हो गई थीं. उस समय की मनमोहन सरकार ने ग्रामीण विकास मंत्री रघुवंश प्रसाद सिंह को भेजा था. रघुवंश प्रसाद सिंह ने तब ग़रीबों को आश्वासन दिया था कि किसान अपनी ज़मीन से उजाड़े नहीं जाएंगे. आदिवासियों को उनका हक़ मिलेगा और खाने कमाने के अवसर सरकार पैदा करेगी.

> **ग़रीबी, बेरोज़गारी, भ्रष्टाचार, महंगाई, बेदख़ली, पीने के पानी जैसी समस्याओं से ग्रस्त लोग पैदल चल, भूखे प्यासे रह अपनी बात कहते हैं और जब आप नहीं सुनते तो उनके पास विकल्प क्या बचता है? तब वे ट्रेन रोकते हैं, सड़क जाम करते हैं, प्रशासन के प्रतीकों को तोड़ते हैं, सरकारी अफ़सरों को अगवा करते हैं तब आप उनकी बात सुनते हैं.**

दो साल बाद ये ग़रीब सरकार को उसके वायदे याद दिलाने आए और सरकार ने कोई नोटिस ही नहीं लिया. अब ये ग़रीब अगले साल सवा लाख की संख्या में दिल्ली आएंगे और करो या मरो के तहत दिल्ली से वापस नहीं जाएंगे. इनके नेता पी वी राजगोपाल का कहना है कि या तो दिल्ली बदलेगी, वायदे पूरे करेगी या फिर ग़रीबों की लाशों के लिए ट्रकों का इंतजाम करेगी.

आज की सरकार नक्सलवादियों को घेरने और उन्हें मारने के लिए अर्धसैनिक बलों और सेना की तैनाती कर रही है तथा वायु सेना को लड़ाकू हेलीकॉप्टरों से गोली चलाने का आदेश दे रही है. ये ग़रीब, जो ख़ुद आधे मरे हुए हैं जिनके मुंह से आवाज़ नहीं निकल रही है, उनकी तक़लीफ़ सुनने का वक़्त सरकार के पास नहीं है, पर नक्सलवादियों का सफ़ाया करने की योजना बनाने का वक़्त है.

ग़रीबी, बेरोज़गारी, भ्रष्टाचार, महंगाई, बेदख़ली, पीने के पानी जैसी समस्याओं से ग्रस्त लोग पैदल चल, भूखे प्यासे रह अपनी बात कहते हैं और जब आप नहीं सुनते तो उनके पास विकल्प क्या बचता है? तब वे ट्रेन रोकते हैं, सड़क जाम करते हैं, प्रशासन के प्रतीकों को तोड़ते हैं, सरकारी अफ़सरों को अगवा करते हैं तब आप उनकी बात सुनते हैं. आप में उनकी समस्याओं को सुनकर हल करने की क्षमता नहीं है, इसलिए आप उन्हें दबाने और मारने की योजना बनाते हैं. यह स्थिति ही नक्सलवाद, माओवाद या उग्रवाद को बढ़ाने और फैलाने का काम करती है. ये ग़रीब आपकी संवेदनहीनता के शिकार होकर हाथ में लाठी और हंसिया उठाते हैं तो आप उन्हें मारने के लिए बजट बढ़ाते हैं. सोचिए नक्सलवाद को कौन बढ़ा रहा है.

किसान खेती करता है, उसे फ़सल का भाव नहीं मिलता. वह आत्महत्या कर लेता है, क्योंकि अपने परिवार को भूखा नहीं देख सकता. सरकार पैकेज देती है पर वह किसानों तक नहीं पहुंचता, बीच में पहुंचाने वाले ही उसका बड़ा हिस्सा खा लेते हैं. आज नहीं तो कल ये आत्महत्या करने वाले, या भूख से मरने का फ़ैसला करने वाले सत्ता के साझीदारों को मारने का फ़ैसला लेकर अपने मरने को सार्थक करने का निर्णय ले सकते हैं.

सबसे दयनीय स्थिति राजनैतिक दलों की है. विपक्ष के नाम पर जो भी हैं वे भी उतने ही अपराधी हैं. वे जनता की समस्या को उठाना ही नहीं चाहते, क्योंकि जानते हैं कि एक जगह आवाज़ उठाई तो वही आवाज़ उस राज्य में जहां उनकी सरकार है, घेर लेगी. मीडिया ख़ामोश रहता है, उसके पास अब लोगों की तक़लीफ़ों को उठाने वाली आवाज़ को स्थान देना समय की बरबादी लगता है. फ़ैशन वीक ज़्यादा महत्वपूर्ण घटना है. लेकिन जो इस स्थिति के विरोध में लिखते हैं उन्हें सरकार नक्सलवाद का समर्थक घोषित कर दे सकती है. राजनीति के अपराधियों और मीडिया के अपराधियों का अब एक ही वर्ग बन गया है और उनकी संस्कृति और हित एक हो गए हैं. इसलिए हमें अभी और बहुत कुछ देखने के लिए तैयार रहना चाहिए.

हिंदुस्तान के लोकतंत्र के इतिहास में अभी कितने काले पन्ने जुड़ेंगे हम नहीं जानते, लेकिन इतना ज़रूर जानते हैं कि अगर सरकार ने ग़रीबों और वंचितों की तक़लीफ़ें नहीं सुनीं तो जल्दी ही वह समय आ जाएगा, जब इस तरह के काले पन्नों के लिखने की शुरुआत हो जाएगी.

संपादक
editor.chauthiduniya.com

क्या नए राज्यों की मांग ज़रूरी है

सौमित्र मोहन

हमारे देश में समय-समय पर नए राज्यों की मांग उठती रही है. ऐसा लगता है कि भारतीय राज्यों की संरचना और पुनर्गठन की मांग का दौर हमेशा चलता रहेगा. किसी को यह लग सकता है कि वर्ष 2000 में नए राज्यों के बनने के बाद अलग राज्यों के गठन की कोई भी राजनीतिक मांग केंद्रीय मुद्दा नहीं बनी. तीन नए राज्यों छत्तीसगढ़, झारखंड और उत्तराखंड के बनने के बाद यही हुआ. हाल ही में, यह देश इस तरह की कई मांगों का गवाह रहा है. आंकड़ों के हिसाब से बात करें तो फ़िलहाल इस तरह की दस मांगें केंद्रीय गृह मंत्रालय के पास लंबित पड़ी हैं. इन मांगों में बिहार में अलग मिथिलांचल, गुजरात में सौराष्ट्र, कर्नाटक में कूर्ग, यूपी में हरित प्रदेश, आंध्र प्रदेश में तेलंगाना, पश्चिम बंगाल में गोरखालैंड, यूपी और एमपी के कुछ हिस्सों को मिलाकर बुंदेलखंड और पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार और छत्तीसगढ़ के कुछ हिस्सों से भोजपुर की मांग उठ रही है.

उक्त सभी मांगें अलग-अलग राजनीतिक संगठनों के ज़रिए उठाई जा रही हैं. मसलन, तेलंगाना राष्ट्र समिति (टीआरएस) एक अलग तेलंगाना राज्य की मांग कर रही है तो गोरखा जनमुक्ति मोर्चा (जीजेएमएम) गोरखालैंड की मांग को लेकर अड़ा हुआ है. बांदा, चित्रकूट, झांसी, ललितपुर व सागर उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के इन क्षेत्रों को मिलाकर एक अलग बुंदेलखंड राज्य बनाने की मांग पिछले कुछ समय से गृह मंत्रालय के पास लंबित है.

गुजरात जो कि देश का सबसे समृद्ध राज्य है, में अलग सौराष्ट्र राज्य बनाने की मांग गृह मंत्रालय के पास कई वर्षों से लंबित पड़ी है. पश्चिमी उत्तर प्रदेश के कई ज़िलों को मिलाकर एक हरित प्रदेश या किसान प्रदेश बनाने की मांग भी केंद्र सरकार के पास पहुंची है. केंद्रीय गृह मंत्रालय के मुताबिक़, विभिन्न राजनीतिक और ग़ैर-राजनीतिक संगठनों ने उससे अलग राज्यों के गठन के संदर्भ में औपचारिक मांगें की हैं. इन मांगों में बिहार के कई इलाक़ों को मिलाकर मिथिलांचल या एक मिथिला राज्य, पश्चिम बंगाल और असम के कुछ हिस्सों से वृहद कूच बिहार, महाराष्ट्र में विदर्भ और कर्नाटक में कूर्ग राज्य के गठन की बात कही गई है. इन मांगों को मानने या यहां तक कि इन मुद्दों पर विचार करने से पहले हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि किस तरह मुगल साम्राज्य के पतन के बाद भारत कई हिस्सों में बंट गया था. मुगल जागीर जो कि सूबे कहलाती थी, के कई पूर्व शासकों ने अपनी आज़ादी की घोषणा कर दी और 18वीं सदी के मध्य तक राजाओं और नवाबों के कई समूह बन चुके थे, जो पूरे उप-महाद्वीप में 600 से भी अधिक रियासतों पर अपना शासन चला रहे थे. यह वही भारत है, जिसे रॉबर्ट क्लाइव ने पराजित किया और 1757 की ऐतिहासिक पलासी की लड़ाई के बाद इस पर अपना क़ब्ज़ा किया. इसी वजह से भारत में ब्रिटिश राज क़ायम हुआ, जो लगभग 200 वर्षों तक रहा.

इन सभी में जो सबसे उल्लेखनीय तथ्य है, वह यह कि रॉबर्ट क्लाइव नवाब सिराजुद्दौला की सेना के एक गुट की मदद से विजयी हुआ था, जो राष्ट्रीयता की किसी भी भावना में बंधा नहीं था, इसलिए वह अपने नवाब को नीचा दिखाने के लिए विश्वासघात करने से ज़रा भी नहीं हिचका. सौ साल बाद एक बार फिर 1857 में इस घटना को दोहराया गया, जब अंग्रेज़ों ने अपनी कुख्यात *फूट डालो और राज करो* की नीति को अपनाते हुए भारतीय सेना के एक गुट को अपने साथ मिला लिया और भारतीय सेना को ही ज़बरदस्त चुनौती दी. सेना के जिस गुट ने अंग्रेज़ों की मदद की, विदेशी सत्ता की मदद करते समय उसमें भारतीय राष्ट्रीयता या एक संप्रभु भारतीय राज्य की भावना नहीं थी. उनमें कोई मराठा, सिख, मुसलमान, राजपूत, बिहारी तो कोई जाट था, लेकिन भारतीय कोई नहीं था. उस समय आर्यावर्त या हिंदुस्तान तो मशहूर था, लेकिन वे भी महज़ भौगोलिक अर्थ ही रखते थे. दरअसल, आज का भारत ब्रिटिश राज के गर्भ से बाहर आ चुका है. ब्रिटिश राज का एक अनापेक्षित लाभ यह कहा जा सकता है कि इसने भारत को एकजुट किया. जिसने आख़िरकार भारतीयता की भावना को जन्म दिया.

यह भारतीयता की ही भावना थी, जिसने हमारे स्वतंत्रता संग्राम में उत्प्रेरक का काम किया. साथ ही एक अखिल भारतीय राष्ट्र के निर्माण का रास्ता तैयार किया. यह वही भारतीयता है, जिसे जवाहर लाल नेहरु ने खोजा, महात्मा गांधी ने संवारा और सरदार पटेल ने संगठित किया. हमने आज़ादी रूपी फल को सिर्फ़ विकसित किया, संजोया और उसका स्वाद चखा. इस तरह एक संप्रभु भारतीय राज्य हमें हमारे पूर्वजों से विरासत में मिला.

अब, हमें यह ध्यान देने की ज़रूरत है कि हमने यह एकता और राष्ट्रीयता कड़ी मेहनत से हासिल की है तो क्या उसे धर्म, संस्कृति और भाषाई स्तर पर छोटे राज्यों की मांग के सामने यूं ही बिख़रने या बर्बाद होने दे सकते हैं. ऐसा माना जाता है कि नए राज्यों के गठन का मतलब यह है कि ऐसी किसी भी तरह की मांग भविष्य में नहीं की जाएगी. दरअसल, राज्यों का गठन उन अलगाववादी ताक़तों को बढ़ावा ही देता है, जो इन मांगों को उठाती हैं और इनसे अपने निजी राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति करती हैं.

छत्तीसगढ़, झारखंड और उत्तराखंड के बनने के बाद अभी भी इन राज्यों को बांटकर नए राज्य बनाने की मांगें की जा रही हैं. मसलन, उत्तर प्रदेश में हरित प्रदेश और इसी तरह बिहार में मिथिलांचल की मांग हो रही है. एक बार गुजरात से सौराष्ट्र बन जाता है तो इसकी कोई गारंटी नहीं कि कच्छवासी एक अलग राज्य की मांग न करें. दरअसल, इस तरह के क़दम पहले भी कच्छ के महाराज़ा ने उठाए थे. आंध्र प्रदेश में तेलंगाना की मांग ने रायलसीमा क्षेत्र के लिए मुश्किल हालात पैदा कर दिए हैं, जो ख़ुद अलग राज्य की मांग कर रहा है. हैदराबाद में मुसलमान भी अपने लिए एक अलग उर्दू राज्य की मांग करने लगे हैं. यह कभी भी ख़त्म न होने वाली भंवर है, जिसके गर्त में भारतीय राष्ट्र डूब सकता है.

कुछ पर्यवेक्षक मानते हैं कि इस तरह की मांग सिर्फ़ राजनीति से प्रेरित होती है. यह मूल रूप से लोकप्रिय मांगों की अपेक्षा महज़ लोकलुभावन राजनीति का ही अंग होती है. इस तरह की मांगों को पूरा होने के लिए न सिर्फ़ वाजिब वजह होनी चाहिए, बल्कि स्थानीय स्तर पर सरकार द्वारा ऐसी सिफ़ारिशें भी की जानी चाहिए. फ़िलहाल किसी भी सरकार द्वारा इस तरह की कोई सिफ़ारिश नहीं की गई है. इसके बग़ैर यह महज़ इच्छित विचार ही हैं. हालांकि कई तर्क दिए जा रहे हैं कि अभी भी कई भारतीय राज्य काफ़ी बड़े हैं और बिना किसी ओछी राजनीति के उन्हें उपयुक्त आकार में तोड़ने की ज़रूरत है. तर्क यह भी है कि इन सारे मसलों को सुलझाने और पूरे देश की तरक्की के लिए दूसरा पुनर्गठन आयोग बनाने पर विचार करने की ज़रूरत है. नए राज्य के गठन में बग़ैर किसी निर्णय से प्रभावित हुए यह कोई भी कह सकता है कि ऐसा फ़ैसला लोकलुभावन राजनीति के बजाय भौगोलिक, प्रशासकीय और आर्थिक रूप से व्यवहारिक तौर पर किया जाना चाहिए.

(लेखक प. बंगाल में आईएएस अधिकारी हैं. आलेख में व्यक्त विचार उनके अपने हैं और इनका सरकार के विचारों से कोई संबंध नहीं है.)

feedback@chauthiduniya.com

मोसाद के एक बड़े अधिकारी की मानें तो 1991 में मोसाद ने अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज बुश की हत्या की साज़िश रची थी. इस बात से यह संकेत मिलता है कि यदि इज़रायल बुश की हत्या की साज़िश रच सकता है तो 1963 में कैनेडी की क्यों नहीं?

क्या नीलाम हो रहा है पाकिस्तान?

अक़दस वहीद

भावुकता की बीमारी से ग्रस्त अमेरिकी नेतृत्व, जिसकी शुरुआत बराक ओबामा से हुई है, ने पाकिस्तान के ख़िलाफ़ अपनी नीति को साफ़ कर दिया है. अमेरिकी, पाकिस्तान के नाभिकीय हथियारों पर अपना क़ब्ज़ा जमा रहे हैं और हम उसके हाथों की कठपुतली बने हैं. एक तरफ आतंकवादी हैं, जो पाकिस्तानी समाज को तार-तार करने की चेतावनी दे रहे हैं तो दूसरी तरफ़ अमेरिकी, पाकिस्तानियों में आक्रोश भरने का काम कर रहे हैं. यह आक्रोश महज़ पाकिस्तानी समाज में ही नहीं पनप रहा है, बल्कि सेना और संवैधानिक ढांचे भी इसकी चपेट में हैं. अमेरिका अच्छी तरह जान रहा है कि जब तक वह पाकिस्तान के सैन्य ढांचे को तबाह नहीं कर देता, तब तक पाकिस्तानी नाभिकीय हथियार उसके क़ब्ज़े में पूरी तरह से नहीं आएंगे. लिहाज़ा पाकिस्तान की सेना को वह एक ऐसी भूमिका में रखना चाह रहा है, जिससे उसका अपने ही लोगों से टकराव हो और हालात बद से बदतर हो जाएं.

पाकिस्तान को और ज़लील करने के लिए अमेरिकी सेक्रेटरी ऑफ स्टेट,सेक्रेटरी ऑफ डिफेंस और डायरेक्टर इंटेलिजेंस से परामर्श करके अमेरिकी कांग्रेस में एक वार्षिक रिपोर्ट देगी. यह रिपोर्ट पाकिस्तानी सेना की भूमिका पर होगी. हालांकि इस भूमिका को परिभाषित नहीं किया गया है, लिहाज़ा इसमें हम अमेरिका के अपेक्षित सवालों को भी शामिल कर सकते हैं, जिसके ज़रिए वह पाकिस्तानी नाभिकीय संयंत्रों के ठिकानों को जानने की कोशिश कर सकता है. क्या हमारी सेना इतनी निराश हो चुकी है कि वह अपनी नाभिकीय संपदा को भी दांव पर लगाने को तैयार है?

कैरी लूगर बिल में प्रावधान है कि अमेरिकी सेक्रेटरी ऑफ स्टेट हर साल कांग्रेस में रिपोर्ट देगी कि क्या पाकिस्तान के नाभिकीय हथियार सुरक्षित हैं. यह प्रावधान कितना ख़तरनाक है, इसका अंदाज़ा इस बात से लगाया जा सकता है कि सुरक्षा की रिपोर्ट देने के लिए अमेरिका को यह जानने की ज़रूरत पड़ेगी कि नाभिकीय हथियार देश में कहां रखे गए हैं, किस अवस्था में हैं और हथियारों को लेकर पाकिस्तान की नीति क्या है. यहां सवाल यह उठता है कि पाकिस्तान के हथियारों को विदेशी निरीक्षण में देने की क्या ज़रूरत है? यह मामला हमारे राष्ट्रीय हित का आधार है.

कैरी लूगर बिल ने पाकिस्तान की आंखें खोल दी हैं. आज हमारे सामने वह सच्चाई है, जो किसी भी अमेरिकी मदद के साथ परोसी जाती है. अमरीकियों को यह कहने में काफी गर्व होता है कि वे किसी को मुफ़्त खाना नहीं परोसते, लेकिन पाकिस्तान में किसी ने ऐसा सोचा भी नहीं था कि अमेरिका के आतंक के ख़िलाफ़ युद्ध का साथ देने की यह क़ीमत उनको चुकानी पड़ सकती है.

इस युद्ध में पाकिस्तानियों के मरने की संख्या बढ़ने के अलावा आर्थिक नुकसान भी चरम पर है, जिसके चलते हम लगातार विदेशी निवेश और व्यापार के संसाधन गंवा रहे हैं तथा व्यवसाय पाकिस्तान में महंगा सौदा साबित हो रहा है. इसके अलावा भी आतंक के ख़िलाफ़ अमेरिकी युद्ध की हम बहुत बड़ी क़ीमत चुका रहे हैं. हम अपने सामाजिक ढांचे को तार-तार कर रहे हैं, हिंसा और अतिवाद को हवा दे रहे हैं. ऐसा नहीं है कि 9-11 के पहले पाकिस्तानी समाज में ऐसे विवादों के बीज मौजूद नहीं थे. लेकिन, आज हमारा नेतृत्व जल्दबाजी और अपनी नासमझी में अमेरिका के इस आतंक के ख़िलाफ़ युद्ध को गले लगा रहा है और हिंसा व अतिवाद के बीज को पोषित कर रहा है.

आश्चर्य इस बात का है कि इतनी बड़ी क़ीमत लेने के बावजूद अमेरिका पाकिस्तान के हालात को समझने की कोशिश नहीं कर रहा है. कैरी लूगर बिल की मदद से जो आज हमारे साथ हो रहा है, वह अमेरिका पहले भी अपने कई मित्र देशों के साथ कर चुका है और कई अन्य मित्र देशों के साथ कर रहा है. इसलिए, आज ज़रूरत अमेरिका के साम्राज्यवादी चरित्र को समझने की है. इसको समझने के लिए सबसे वाजिब उदाहरण दक्षिणी अमेरिका के उन देशों के साथ अमेरिकी व्यवहार है, जिन्हें वह प्रथम विश्वयुद्ध के बाद से ही अपने साम्राज्य का हिस्सा मानता रहा है.

अगर हम कैरी लूगर बिल की शर्तों को समझने की कोशिश करें, तो हमें वर्ष 2000 में कोलंबिया को दी गई 1.3 बिलियन डॉलर की मदद को देखना होगा. इस मदद को पूर्व राष्ट्रपति बिल क्लिंटन ने जारी किया था. पाकिस्तान को दी गई मदद की अपेक्षा कोलंबिया को उस वक़्त दी गई यह एक सैन्य मदद थी. इस मदद में भी कई शर्तों को साथ में रखा गया था. एक शर्त के मुताबिक़, सेक्रेटरी ऑफ स्टेट हर साल आर्थिक मदद देने से पहले अमेरिकी कांग्रेस को रिपोर्ट देगी कि कोलंबिया उन सैनिकों को सज़ा दे रहा है, जो मानवाधिकार के दोषी पाए गए हैं.

हम सभी चाहते हैं कि पाकिस्तानी सेना असैनिक नियंत्रण में रहे, लेकिन क्या हम यह भी चाहते हैं कि कोई विदेशी ताक़त नियंत्रण की बागडोर अपने हाथों में ले ले? कोलंबिया में शर्तें महज़ इतनी नहीं थीं. रिपोर्ट में इस बात की भी गारंटी होनी थी कि सेना प्रमुख ऐसे अफ़सरों को निलंबित कर देते हैं, जिनके ख़िलाफ़ मानवाधिकार उल्लंघन और सैन्य गुटों को मदद करने के साक्ष्य मौजूद थे. वास्तव में यह बिल भी इतनी सूक्ष्म चीजों को साथ लेकर बनाया गया था, जिससे सेक्रेटरी ऑफ स्टेट की रिपोर्ट कह सके कि कोलंबियाई सेना अपने अधिकारियों को सज़ा देने के लिए लोकतांत्रिक सरकार की मदद कर रही है. इस बिल में यह भी प्रावधान था कि कोलंबिया की सरकार इस बात को सुनिश्चित करे कि वह सैन्य गुट के नेताओं को सज़ा दे रही है. यह बिल भी पाकिस्तान को दी जा रही मदद जैसा ही है, भले ही कुछ प्रावधान कोलंबियाई शर्तों जैसे कठोर नहीं हैं. कोलंबियाई सेना के लिए एक और घातक प्रावधान था कि वह सैनिक यूनिट में न्यायाधीशों की नियुक्ति करेगी, जिससे सैनिकों के दुर्व्यवहार की जांच की जा सके.

ऐसी शर्तों का शिकार महज़ कोलंबिया ही नहीं हुआ है. अमेरिका के पड़ोसी देश मैक्सिको को भी ड्रग माफ़िया के ख़िलाफ़ अपनी लड़ाई के लिए अगस्त 2009 में मिली अमेरिकी मदद में ऐसे प्रावधान थे. अमेरिकी सिनेटर पैट्रिक लियाही ने मैक्सिको को एंटी नारकोटिक मदद देने में कई शर्तों को साथ में परोसा था. यहां भी मदद की शर्तों में प्रावधान है कि सेक्रेटरी ऑफ स्टेट अमेरिकी कांग्रेस को अपनी रिपोर्ट देगी, जिसमें यह सुनिश्चित करना होगा कि मैक्सिको सरकार उन सैनिक अधिकारियों को सज़ा देगी, जो मानवाधिकार उल्लंघन के दोषी हैं. यहां भी सेना को निशाना बनाया गया, जबकि यह सभी जानते हैं कि सेना ड्रग माफ़िया के ख़िलाफ़ युद्ध में सबसे आगे खड़ी है.

आख़िर ऐसा क्यों है कि सेना को हर बार निशाने पर लिया जा रहा है? पहला, इसलिए क्योंकि किसी भी देश की सेना राष्ट्रीय हितों की रक्षा करती है और उसकी यह ज़िम्मेदारी अमेरिकी राष्ट्रीय हितों के आड़े आती है. दूसरा, इसलिए कि सेना इन सभी देशों में एक शक्तिशाली संस्था है. लिहाज़ा जब तक सेना को सबक सिखाकर अपने क़ब्ज़े में न कर लिया जाए, तब तक उसके अपने हित सुरक्षित नहीं रहेंगे. भले ही विकासशील देशों में ज़्यादातर नागरिक राजनीतिक और लोकतांत्रिक ढांचों पर सेना का वर्चस्व चाहते हैं, लेकिन वे कभी नहीं चाहेंगे कि कोई विदेशी ताक़त उनके देश के अंदरूनी मामलों में दख़ल दे. यह तब और भी ज़रूरी हो जाता है, जब हम यह जानें कि अमेरिका हमारे जैसे देशों के लिए भूमिका तय करता है, भले ही वह भूमिका हम ख़ुद नहीं अदा करना चाहते.

जब तक हमारे नेता अमेरिका की इस साम्राज्यवादी नीयत को नहीं समझते, जिसके चलते ओबामा के रूप में एक विदेशी पूर्व राष्ट्रपति जॉर्ज बुश की नीतियों को न महज़ जारी रख रहा है, बल्कि ज़्यादा रफ़्तार के साथ हम पर उन नीतियों को थोप भी रहा है. इसीलिए आज ज़रूरत है कि पाकिस्तान ऐसी अमेरिकी मदद को लेने से मना कर दे, जो हमारे सालाना बजट का महज़ तीन फ़ीसदी है और जिसके बदले में पाकिस्तान को अपनी संप्रभुता से हाथ धोना पड़ रहा है.

भ्रष्टाचार को ख़त्म करते हुए अगर हम देश की संपदा को विकास के रास्ते पर ले जाएं और ख़ासतौर पर ऐसे नेताओं से छुटकारा पा लें, जिन्हें हम हारा हुआ जान रहे हैं तो हम अपनी मदद ख़ुद कर सकते हैं. मेरा साफ़ मानना है कि अगर हमारे नेता थोड़ी सच्चाई का सामना करते हुए इस अमेरिकी मदद को लेने से मना कर दें, अपने विलास में पैसे ख़र्च करने की जगह देश के लिए एक आर्थिक नीति का निर्माण करें तो हम अपना वजूद और अपनी संप्रभुता, दोनों की रक्षा कर सकेंगे.

feedback@chauthiduniya.com

ख़ुफ़िया एजेंसियों के सीक्रेट

मोसाद ने की अमेरिकी राष्ट्रपति की हत्या!

बात इस नवंबर 1963 का दिन. अमेरिकी राष्ट्रपति जॉन एफ कैनेडी टेक्सास के डोलास शहर में सफ़र पर निकले. उनके साथ टेक्सास के गवर्नर जॉन कॉनली भी थे. तभी अचानक एक के बाद एक, तीन गोलियां कैनेडी की ओर आईं. एक गोली ने अपना निशाना कैनेडी की गाड़ी को बनाया. दूसरी गोली कैनेडी को छूती हुई जॉन कॉनली को लगी और वह बुरी तरह ज़ख्मी होकर गिर गए. इससे पहले कि ख़ुद को संभाल पाते, तीसरी गोली ने कैनेडी को निशाना बना लिया और यह तीसरी गोली ही उनके लिए जानलेवा साबित हुई. फिर क्या था, चारों तरफ हड़कंप मच गया. ऐसा हो भी क्यों नहीं, आख़िर यह दुनिया के सबसे शक्तिशाली शख़्स की हत्या का मामला जो था. यह हर कोई अंदाज़ा लगा सकता है कि इसके बाद हत्यारे का बच निकलना नामुमकिन था और हुआ भी कुछ ऐसा ही. अमेरिकी पुलिस ने हत्या के दो घंटे के भीतर ही राष्ट्रपति कैनेडी की हत्या करने वाले मास्टरमाइंड को गिरफ़्तार कर लिया.

दरअसल, यह शख़्स ली हार्वे ओस्वाल्ड था, जिसे डोलास में एक पुलिस अधिकारी की हत्या के बाद हिरासत में लिया गया था. कई लोगों का मानना था कि कैनेडी की हत्या में भी ओस्वाल्ड का ही हाथ है, लेकिन इस कहानी में अभी दिलचस्प मोड़ आना बाक़ी था. हुआ कुछ यूं कि जब ली हार्वे को जेल ले जाया जा रहा था, तभी रास्ते में ही उसकी हत्या कर दी गई. इस तरह कैनेडी की हत्या की गुत्थी उनकी मौत के तुरंत बाद ही ऐसी उलझी कि आज भी शक़ की सूइयां हर तरफ़ घूम रही हैं, लेकिन अभी तक पुख्ता तौर पर किसी को भी इसके लिए कसूरवार नहीं ठहराया जा सका है. यही वजह है कि सबसे ताक़तवर राष्ट्रपति की हत्या की साज़िश के पीछे उन लोगों का हाथ नज़र आता है, जो ख़ुद अमेरिका के ख़ासमख़ास बने हुए हैं. यह एक ऐसी हत्या थी, जिसके पीछे एक नहीं, कई वजहें सामने आ रही थीं. फ्रांसीसी ख़ुफ़िया एजेंसी की मानें तो यह हत्या किसी जादूगर का काम था. मतलब अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि यदि कई देशों की ख़ुफ़िया एजेंसियां भी इस साज़िश को समझने में असफल रहीं. ऐसे में इसे सुलझाना तो उनके बूते के बाहर की बात थी. जी हां, यह हत्या का ऐसा मामला था, जिसमें शक़ किसी एक देश या उसके ख़ुफ़िया एजेंट्स पर नहीं था. इस हत्या की वारदात को अंजाम देने के शक़ के दायरे में सीआईए, रूसी ख़ुफ़िया एजेंसी केजीबी, अमेरिकी माफ़िया संगठन, अमेरिकी एजेंसी एफबीआई प्रमुख एडगर हूवर, पूर्व उप राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन, तत्कालीन उप राष्ट्रपति लिंडन बी जॉनसन और क्यूबाई तानाशाह फिदेल कास्त्रो तक का नाम आ चुका था. यह मसला इतना उलझ चुका था कि इसे सुलझाने का दावा करने वाले ख़ुद ही इस गुत्थी में उलझ कर रह गए. फिर 1963 के बाद इस साज़िश के गुनहगारों में न जाने कितने संगठनों और ख़ुफ़िया एजेंसियों का नाम जुड़ा.

लेकिन 17 साल पहले, वर्ष 1992 में इस हत्या की साज़िश रचने वालों में एक नया नाम जुड़ा. यह एक ऐसी ख़ुफ़िया एजेंसी थी, जिसके रिश्ते अमेरिका के साथ हमेशा से ही बेहतर रहे. यह एजेंसी थी इज़रायली ख़ुफ़िया एजेंसी मोसाद. अभी तक न केवल मोसाद, बल्कि अमेरिकी एजेंसी सीआईआई और मोसाद के रिश्ते भी शक़ के दायरे में आ चुके थे. यहां तक कि कई अमेरिकियों का मानना था कि कैनेडी की हत्या की साज़िश में सीआईआई का ही हाथ है. कुछ लोग मोसाद के आतंक से इतने भयभीत थे कि मोसाद पर अंगुली उठाने की उनकी हिम्मत तक नहीं होती थी. उन्हें मालूम था कि इसका अंजाम क्या होगा? मोसाद अपने कारनामों पर सवाल उठाने वाले लोगों का क्या हश्र करता है? दरअसल, इज़रायल के बनने के समय से ही अमेरिकी ख़ुफ़िया एजेंसी सीआईए और मोसाद के बीच एक समझौता हुआ, जिसके तहत मोसाद अमेरिका में सीआईए के उन सभी कारनामों को अंजाम देगा, जो सीआईए के लिए मुमकिन ही नहीं, असंभव थे. कई विश्लेषकों की मानें तो जॉन एफ कैनेडी की हत्या की साज़िश उन्हीं समझौतों की एक कड़ी थी. हालांकि यह कभी साबित नहीं हो सका कि दुनिया के सबसे ताक़तवर शख़्स की हत्या के पीछे किसकी ख़ौफ़नाक मंशा थी. लेकिन मोसाद पर शक़ करने की कई वजहें थीं. मसलन 1963 में अमेरिकी राष्ट्रपति और इज़रायली प्रधानमंत्री डेविड बेन गुरियन के बीच आपसी संघर्ष अपने चरम पर था, जिसकी वजह थी कैनेडी का इज़रायल को एटम बम बनाने से रोकना. दरअसल, अमेरिकी ख़ुफ़िया एजेंसी चारों तरफ़ से इस्लामिक देशों से घिरे इज़रायल को एटम बम बनाने देने के पक्ष में थी, लेकिन कैनेडी इसके ख़िलाफ़ थे. वह इज़रायल की हर तरह से मदद करने पर तो राज़ी थे, पर एटम बम बनाने की अनुमति कभी नहीं देना चाहते थे. सारा मसला तब बेक़ाबू हो गया, जब इज़रायली प्रधानमंत्री ने यह कहते हुए इस्तीफ़ा दे दिया कि जॉन कैनेडी की नीतियों से इज़रायल पूरी तरह तबाह हो जाएगा. यही वजह है कि कैनेडी की हत्या की जांच में लगे संगठनों के शक़ की सूई मोसाद की ओर गई. कई लोगों का तो यहां तक मानना था कि जॉन कैनेडी चीन के उन ठिकानों पर हमला करने की योजना बना रहे थे, जहां उसकी न्यूक्लियर बम बनाने की योजना चल रही थी. लेकिन इन सबसे मोसाद को क्या लेना-देना था. दरअसल जब कैनेडी ने इज़रायल को एटम बम बनाने से रोका तो इज़रायल अपने इस मिशन को चीन के सहयोग से पूरा करने में जुट गया. यह बात अमेरिका को काफ़ी नागवार गुज़री, क्योंकि चीन हमेशा से अमेरिका की आंखों की किरकिरी बना रहा. इस तरह अपने मंसूबों पर पानी फिरते देख इज़रायल ने कैनेडी की हत्या की साज़िश रची, लेकिन एक बार फिर कहना होगा कि इसके पुख्ता सबूत कभी नहीं मिले कि अमेरिकी राष्ट्रपति की हत्या की साज़िश में मोसाद शामिल था.

कैनेडी की हत्या का मामला इस क़दर उलझ चुका था कि इसकी साज़िश रचने वालों का अंदाज़ा लगाना भी मुश्किल हो चुका था. 1991 में, मोसाद के एक बड़े अधिकारी की मानें तो उसी साल यानी 1991 में ही मोसाद ने अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज बुश की हत्या की साज़िश रची थी. इस बात से यह संकेत मिलता है कि यदि इज़रायल बुश की हत्या की साज़िश रच सकता है तो 1963 में कैनेडी की क्यों नहीं? इस हत्या की जांच करने वालों पर कई सवाल भी उठे कि वे इस मामले की जांच की दिशा और दशा बिगाड़ रहे हैं, ताकि कैनेडी की हत्या के सही गुनहगारों (मोसाद) को बचाया जा सके.

इज़रायल का ख़ुफ़िया आतंक

इज़रायली प्रधानमंत्री डेविड बेन गुरियन | हत्या के वक़्त कैनेडी इसी गाड़ी में थे | अमेरिकी राष्ट्रपति जॉन एफ कैनेडी

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

हिलेरी क्लिंटन का यह दौरा ऐसे वक्त में हुआ, जब पाकिस्तानी सेना तहरीक-ए-तालिबान के गढ़ दक्षिणी वजीरिस्तान में अपना ऑपरेशन चला रही है. इस ऑपरेशन को रोकने के लिए तहरीक के सरगना मेहसूद ने कई कोशिशें की.

पाकिस्तान को युद्ध का केंद्र बना रहा है अमेरिका

राहुल मिश्र

इस्लामाबाद हवाई अड्डे पर उतरने से ठीक पहले अमेरिकी विदेश मंत्री हिलेरी क्लिंटन से पाकिस्तान दौरे का मक़सद पूछा गया. सवाल अहम था, क्योंकि पूरी दुनिया जानना चाहती है कि अमेरिका पाकिस्तान में क्या करना चाहता है. अमेरिकी की अफ़-पाक नीति में अफ़ग़ानिस्तान के हालात को पूरी दुनिया देख रही है, लेकिन इस नीति में पाकिस्तान के लिए क्या भूमिका तय है, यह देखना अभी बाक़ी है. बहरहाल, हिलेरी के जवाब को देखने से पहले यह बात मान ली जाए कि अंतर्राष्ट्रीय नीतियों पर पूछे गए सवालों के जवाब दिए नहीं जाते. हिलेरी क्लिंटन ने भी यही किया. स्वात में पाकिस्तानी सेना के अभियान पर आधिकारिक ख़ुशी का इज़हार करने के साथ हिलेरी ने कहा कि पाकिस्तान में फैला आतंकवाद का जाल अल-क़ायदा से जुड़ा है और इसीलिए आतंकवाद के सफ़ाए की पाकिस्तानी कवायद अमेरिका के राष्ट्रीय हितों के मुताबिक़ चल रही है. इस कवायद में पाकिस्तान को काफी नुक़सान उठाना पड़ रहा है. बेगुनाह जनता के साथ पाकिस्तानी पुलिस और सेना के जवान भी शहीद हो रहे हैं. हिलेरी ने यह भी कहा कि पाकिस्तान के बाहर बैठे लोग इस युद्ध की कठिनाई का अंदाज़ा नहीं लगा सकते हैं. लेकिन सवाल अमेरिकी हितों का है, लिहाज़ा यह अमेरिका की ज़िम्मेदारी है कि वह पाकिस्तान की हर मुमकिन मदद करे.

हिलेरी क्लिंटन का यह दौरा ऐसे वक़्त में हुआ, जब पाकिस्तानी सेना तहरीक-ए-तालिबान के गढ़ दक्षिणी वजीरिस्तान में अपना ऑपरेशन चला रही है. इस ऑपरेशन को रोकने के लिए तहरीक के सरगना बैतुल्लाह मेहसूद ने कई कोशिशें की. पाकिस्तान में सेना और पुलिस ठिकानों पर आतंकवादियों ने कई हमलों को अंजाम दिया, कुछ बेगुनाह लोग इन हमलों में मारे गए, लेकिन पाकिस्तानी सेना का अभियान नहीं रूका. इन हमलों में सबसे अहम बात यह साबित हुई कि पाकिस्तान का कोई भी शहर ऐसा नहीं है, जिसे आतंकियों से महफूज़ कहा जा सके. इन हालात में जब पाकिस्तानी सेना दक्षिणी वजीरिस्तान में मोर्चा खोलने की तैयारी कर रही थी, तो वजीरिस्तान से सटे अफ़ग़ानिस्तान की सीमा पर तैनात अमेरिकी चेकपोस्ट को बंद करने का मामला उजागर होता है. पाकिस्तान के अख़बारों में सुर्ख़ियां बनी, इस ख़बर के मुताबिक़, *पाकिस्तानी सेना के ऑपरेशन के महज़ पांच दिन पहले पाक-अफ़ग़ान सीमा पर आठ अमेरिकी चेकपोस्टों को बंद कर दिया जाता है, जिसमें जंबाली और नुर्खा समेत चार चेकपोस्ट दक्षिणी वजीरिस्तान से सटे इलाक़ों में थे और बाक़ी के चार उत्तरी वजीरिस्तान सीमा पर. इस फ़ैसले से एक बार फिर अफगान तालिबानियों को पाकिस्तान की सीमा में घुसने में आसानी हो गई है.* दरअसल, उत्तरी वजीरिस्तान की सीमा के पार अफ़ग़ानिस्तान में अफगानी तालिबान का गढ़ है और पिछले कई सालों से इस इलाक़े में पाकिस्तानी सेना समेत आईएसआई की ख़ासी पैठ रही है. हक़ीमुल्लाह मेहसूद अपने आतंकी लड़ाकों के साथ इन्हीं इलाक़ों में अमेरिकी सेना के लिए ले जाए जा रहे रसद की लूटपाट करता था और पाकिस्तानी तालिबान का अफ़ग़ानिस्तान से संबंध इन्हीं इलाक़ों में काफी गहरा था. पहले जब अमेरिकी सेना ने अफगानिस्तान में अलक़ायदा और तालिबान के ख़िलाफ़ जंग की शुरुआत की थी, तब आईएसआई की मदद से पाकिस्तानी तालिबान अपने लड़ाकों को अफ़ग़ानिस्तान भेजता था. कुछ साल तक जद्दोज़हद के बाद अमेरिकी सेना ने पाकिस्तान के साथ सटी इस अफ़ग़ानी सरहद पर अपना क़ब्ज़ा किया और कुछ हद तक रसद सप्लाई पर हमलों को रोकने में सफलता पाई. लेकिन जब पाकिस्तानी सेना ने स्वात ऑपरेशन की शुरुआत की तो पाकिस्तानी तालिबान को अफ़ग़ान तालिबान की मदद पहुंचनी शुरू हो गई. आज जब पाकिस्तान दक्षिणी वजीरिस्तान में आतंकियों का मुक़ाबला कर रहा है तो ऐसे में पाक-अफ़ग़ान सीमा को खुला छोड़ दिए जाने के काफी घातक नतीजे हो सकते हैं. पिछले कई महीनों से पाकिस्तानी सेना अफगान सीमा से चल रही घुसपैठ का मामला अमेरिकी एजेंसियों के सामने उठाती रही है. लेकिन अमेरिका की सेक्रेटरी ऑफ स्टेट हिलेरी क्लिंटन इस मामले में कोई भी बयान देना नहीं चाहतीं.

बहरहाल, पाक-अफ़ग़ान सीमा को खुला छोड़ देने के नतीजे कितने घातक हो सकते हैं, इस बात का अंदाज़ा इसी से लगाया जा सकता है कि पाकिस्तानी सेना के प्रमुख मेजर जनरल कयानी मामले को फ़ौरन राष्ट्रपति ज़रदारी तक पहुंचा देते हैं. हैरानी इस बात की है कि वजीरिस्तान ऑपरेशन की शुरुआत के बाद पाकिस्तान का दौरा करने के लिए पहुंची हिलेरी को पहले तो इस बात का अंदाज़ा ही नहीं था कि अमेरिकी चेकपोस्टों को बंद कर दिया गया है. लेकिन इसी मुद्दे पर लगातार पूछे जा रहे सवालों पर अंत में उन्हें सफ़ाई देनी पड़ी कि पाकिस्तान सरकार की अमेरिकी सरकार से बातचीत चल रही है, इसके साथ ही दोनों देशों के सेना प्रमुख और ख़ुफ़िया तंत्र सीआईए और आईएसआई लगातार संपर्क में हैं. लिहाज़ा ऑपरेशन में उठने वाले किसी भी मामले को वे आपसी राय-मशविरे से हल कर लेंगे. इसके साथ ही हिलेरी ने अपनी सफ़ाई में यह भी कहा कि कुछ सवालों के जवाब खुद राष्ट्रपति बराक ओबामा के लिए छोड़ दिए जाने चाहिए.

यहां पर एक बार फिर याद कर लें कि पूर्व राष्ट्रपति जॉर्ज बुश के आतंक के ख़िलाफ़ युद्ध के करार को किस तरह से बराक ओबामा ने अंतर्राष्ट्रीय शांति के नाम पर बदल दिया. आज अब हिलेरी एक वफ़ादार मुलाज़िम की तरह पाकिस्तान पहुंच कर बराक ओबामा की नीति का सही चेहरा उजागर कर रही हैं. दरअसल हिलेरी ने पाकिस्तान की जनता को बताया कि अमेरिका पाकिस्तान के इस युद्ध में उसके साथ है और हमेशा उसके पीछे खड़ा रहेगा. उनके मुताबिक़, जहां बुश काल में अमेरिका के आतंक के युद्ध में पाकिस्तान ने साथ देने की शुरुआत की थी, वहीं बराक ओबामा के दौर में यह युद्ध अमेरिका के बजाय पाकिस्तान का हो गया है. पाकिस्तान में आज भी छप रहे लेखों में और आधिकारिक बयानों में यह बात आती है कि वह अमेरिका का युद्ध लड़ रहा है. क्या अपने आप को बुश से अलग करने की यह बराक ओबामा की कोशिश है कि उनके द्वारा शुरू किया गया युद्ध पाकिस्तान का युद्ध करार दिया जाए.

अमेरिका की अफ़-पाक नीति में शामिल वे चालीस देश, जो नाटो सेना में सक्रिय भूमिका में हैं, फ़िलहाल अफ़ग़ानिस्तान में चल रहे युद्ध पर अपने देशों में विरोध का सामना कर रहे हैं. इंग्लैंड की पार्लियामेंट अफ़ग़ानिस्तान में और सैनिकों को भेजने की मंजूरी देने में आनाकानी कर रही है तो फ्रांस में भी इस युद्ध के ख़िलाफ़ विपक्ष की मोर्चेबंदी से सरकार परेशान है. सबसे हास्यास्पद तो लंदन टाइम्स की वह ख़बर है, जिसमें दावा किया गया है कि अफ़ग़ानिस्तान में नाटो की संयुक्त सेना में शामिल इटली के सैनिक तालिबानी कहर से बचने के लिए तालिबानियों को रिश्वत दे रहे हैं. ऐसे ही कई आरोप कनाडाई सैनिकों पर भी लग रहे हैं. दुनिया भर में युद्ध विश्लेषक अफ़ग़ानिस्तान में अमेरिका की हार की आशंका जता रहे हैं आर इस कारण पिछले कई महीनों से अफ़ग़ानिस्तान में और सैनिक टुकड़ी भेजे जाने की मांग पर अमेरिका और अन्य देश कोई फ़ैसला नहीं ले पा रहे हैं.

हिलेरी का पाकिस्तान का दौरा ऐसे वक़्त में तय हुआ और किया गया, जब पाकिस्तान में पिछले कुछ हफ़्तों से आतंकी वारदातों ने जोर पकड़ रखा है. लेकिन जैसे ही हिलेरी पाकिस्तान की सरज़मीं पर उतरीं, पेशावर में आतंकवादियों ने एक बड़ा धमाका कर 100 से भी ज़्यादा लोगों की जान ले ली. ज़ाहिर है, आतंकियों को अमेरिका से आने वाला कोई भी मेहमान फूटी आंख नहीं भाता. जो लोग इन हमलों में मारे गए, उनके परिवार वाले कह रहे हैं कि क्यों मुसीबत की इस घड़ी में किसी अमेरिकी को पाकिस्तान आने दिया गया. उनका सवाल है कि क्या राजनीति और सत्ता के दलालों को पाकिस्तान के हालात मालूम नहीं. देश की जनता को भले ही किसी के आने या फिर जाने से फ़र्क़ नहीं पड़ता, लेकिन किसी के आने पर अगर मौत का तांडव हो जाए, तो मरने वालों में इसी जनता की गिनती होती है. यह हमला इस्लामाबाद के उन ठिकानों पर नहीं हुआ, जहां हिलेरी मौजूद रहीं, बल्कि सैकड़ों कोस दूर बेगुनाह और बेकसूर पाकिस्तानियों के बीच हुआ. लिहाज़ा पाकिस्तान पहुंचते ही हिलेरी ने पेशावर हमले की निंदा की और पाकिस्तान के लोगों के साथ होने की बात कही. इसके साथ ही हिलेरी ने पाकिस्तानी अवाम को एक सुनहरे भविष्य की तस्वीर दिखाई-खुशहाल और शांति के प्रतीक पाकिस्तान की.

पिछले कुछ महीनों में जिस तरह से पाकिस्तान में आतंकी वारदातों को अंजाम दिया जा रहा है और जिस तरह से पाकिस्तान के सरहदी इलाकों में अमेरिकी ड्रोन मिसाइलों का कहर बरप रहा है, उससे साफ़ लगता है कि मौजूदा वक़्त में आतंक के ख़िलाफ़ युद्ध के लिए मैदान बदलने की कवायद चल रही है. अमेरिकी ख़ुफ़िया की ओर से लगातार चेतावनी आ रही है कि पाकिस्तान की आतंकी संगठन दुनिया भर में कहीं भी एक बड़ी घटना को अंजाम दे सकते हैं. क्या अब भी इस बात को मानने में कोई शक़ है कि पाकिस्तान युद्ध का केंद्र बन चुका है?

rahul@chauthiduniya.com

spice
www.spice-mobile.com
अब सब खल्लास!
मल्टी-सिम M-4580 की आकर्षक कीमत और भरपूर खूबियाँ करे सबको खल्लास।

M-4580
किलर खूबी: बड़ी बैट्री
25 दिनों का स्टैंड-बाइ टाइम और 10 घंटों का टॉकटाइम
मल्टी-सिम (GSM/GSM)
MP3 प्लेयर और FM रिकार्ड
वन-टच टॉर्च और करैन्सी चैकर
4 GB तक एक्सपैन्डेबल मैमोरी
BEST BUY PRICE: Rs. 2149

M-5252
10 दिनों का स्टैंड-बाइ टाइम और 4 घंटों का टॉकटाइम
मल्टी-सिम (GSM/GSM)
डिजिटल कैमेरा
बिल्ट-इन FM एंटेना
ड्यूअल LED टॉर्च
8 GB तक एक्सपैन्डेबल मैमोरी
BEST BUY PRICE: Rs. 3049

C-5300
सभी CDMA कनेक्शन के साथ चले
बड़ी स्क्रीन
डिजिटल कैमेरा
MP3 प्लेयर और FM रिकार्ड
एक्सपैन्डेबल मैमोरी
वन-टच टॉर्च
BEST BUY PRICE: Rs. 2999

बड़ी स्क्रीन | बड़ी मैमोरी | बड़ा साउण्ड | बड़ी बैट्री
big series

Spice Mobiles come loaded with:
emergic email2sms Mail on Mobile | Shuffle Ring tone | mGurujee | ibibo i build · i bond | REUTERS | Mobile Tracker

Registered Office: Spice Mobiles Ltd., D-1, Sector-3, Noida 201301, Uttar Pradesh, India. Fax: +91-120-4363845. E-mail: contactus@spicemobile.in. Spice Mobile Phones are available at all leading telecom outlets. *Conditions apply. Price features and specifications are subject to change without prior notice. Some of the listed capacity is used for phone functions and thus available capacity could be less than the quoted figure. Battery operation time may vary depending on network usage, environment, music and video formats.
www.itsaugust.com

ख़राब किडनी वाले व्यक्ति को बचाने के लिए सप्ताह में कम से कम दो या तीन बार डायलेसिस की ज़रूरत होती है. डायलेसिस पर रहने वाला व्यक्ति पांच से 25 वर्ष तक ज़िंदा रह सकता है.

दिल्ली, 9 नवंबर–15 नवंबर 2009
चौथी दुनिया

जब किडनी न करे काम

रीतिका सोनाली

किडनी हमारे शरीर का एक आवश्यक अंग है. शरीर में ख़ून बनने की प्रक्रिया यहीं से शुरू होती है, क्योंकि रक्त का निर्माण करने वाला हार्मोन एरीथनोप्रॉयटीन किडनी से ही निकलता है. यह रक्त को शुद्ध करने और रासायनिक संतुलन बनाने का भी काम करता है. इसके अलावा आहार में लिए जाने वाले विटामिन–डी का एक्टिवेशन भी यहीं से होता है जिससे हड्डियों को ताक़त मिलती है. दिल्ली स्थित गंगाराम अस्पताल के कंसल्टेंट नेफ्रालॉजिस्ट डॉ. दिनेश खुल्लर बताते हैं कि जब किडनी शरीर के प्रोटीन, नाइट्रोजन, एसिड आदि को छान नहीं पाता है और जल, सोडियम, पोटाशियम आदि का सुतंलन ठीक नहीं कर पाता है तो शरीर में गंदगी इकट्ठी होती चली जाती है. इसे ही किडनी फेल होना कहते हैं.

किडनी दो तरह से ख़राब होती है

अल्पकालिक/टेम्परी : आदमी ठीकठाक होता है, पर अचानक कोई परेशानी आ जाती है. जैसे किसी तरह की दुर्घटना हो जाए जिससे तंत्र ठीक तरह से काम न कर पाए. दस्त लग जाएं. पेट दर्द हो जाए. किसी तरह का इंफेक्शन या किसी दवा का असर इत्यादि. बेवजह या ज़्यादा मात्रा में दर्द की दवा खाने की वजह से अच्छे–भले आदमी की भी किडनी ख़राब हो जाती है.

स्थायी/ परमानेंट : किडनी या गुर्दा ख़राब होने की मुख्य वजह मधुमेह और हाइपरटेंशन है. यदि मधुमेह और हाइपरटेंशन पर नियंत्रण न किया जाए तो वह किडनी को काफ़ी क्षति पहुंचा सकती है. जिन लोगों के परिवार में मधुमेह, मोटापा और हाइपरटेंशन का इतिहास रहा है, उन्हें इसके प्रति ख़ास सावधानी बरतनी चाहिए.

किडनी के काम न करने पर क्रिटेनीन नामक हार्मोन का बनना बढ़ जाता है और साफ़ ख़ून बनना बंद हो जाता है. इससे एसिड और दूसरी अनावश्यक चीज़ें छन नहीं पाती हैं तब शरीर में यूरिया की मात्रा बढ़ जाती है. इसके साथ ही किडनी के काम न करने के लक्षण नज़र आने लगते हैं. हालांकि इस बीमारी के लक्षण ऐसे नहीं हैं जिससे किडनी के काम न करने का आसानी से पता लग पाए, पर लक्षणों को देखते हुए काफ़ी समय तक दवा लेने के बाद भी यदि मर्ज़ ठीक न हो पाए तो इस बीमारी का टेस्ट ज़रूर करवाएं. इसके लक्षण हैं–

- शरीर के कई हिस्सों जैसे हाथ, पैर, चेहरे इत्यादि में सूजन होने लगती है, जो जानलेवा हो सकता है.
- भूख कम लगना.
- उल्टी आना.
- सुस्ती बढ़ जाना.
- एनीमिया यानी ख़ून की कमी
- सांस फूलना
- हृदय पर जोर पड़ना. इससे आमतौर पर हृदय में तक़लीफ़ होती है.

अस्थायी तौर पर किडनी ख़राब होने पर कुछ ख़ास बातों का ध्यान रखें

- ग़लत दवा लंबे वक़्त तक न खाएं.
- खाने–पीने का विशेष ख्याल रखें.
- जल्दी ही डॉक्टरी परामर्श लेकर उपचार कराएं.

स्थायी तौर पर किडनी ख़राब होने पर इलाज करवाएं

- **डायलेसिस :** इस प्रक्रिया के तहत शरीर में जमा हुए गंदे ख़ून और दूसरी गंदगी की सफ़ाई करके शरीर में फिर से साफ़ रक्त प्रवाहित किया जाता है. आमतौर पर यह काम किडनी का होता है जिसके ठीक तरह से न कर पाने की वजह से जो काम किडनी को करना होता है, वो बाहर से किया जाता है. इसे दो प्रकार से अंजाम दिया जा सकता है. हिमेटोडायलेसिस और पेरीटोनियल डायलेसिस.
- **हिमेटोडायलेसिस :** इस प्रक्रिया में मरीज के रक्त प्रवाह को शरीर से बाहर रखे डायलेसिस सर्किट द्वारा संचालित कराया जाता है. इससे रक्त का शुद्धिकरण कर शरीर के दूसरे अनुपयोगी फ्लूईड को हटाया जाता है. इस प्रणाली में बाजू में दो जगह पर सूई डालते हैं. इनमें एक सूई से नली के ज़रिए शरीर के ख़ून को बाहर निकाला जाता है और बाहर रखी हेमोडायलेसिस मशीन में डालकर, फिर उसे शुद्ध कर दूसरी नली से वापस कर बाजू में लगी दूसरी सूई के ज़रिए शरीर में प्रवाहित कर दिया जाता है. इस काम के लिए मरीज को अस्पताल जाना पड़ता है, क्योंकि इसमें काफी सावधानियां बरतनी पड़ती हैं जो केवल मेडिकल निगरानी में ही संभव है. इस पर आश्रित रहने वाले मरीजों को हफ़्ते में तीन बार इस प्रक्रिया से गुज़रना पड़ता है.
- **पेरीटोनियल डायलेसिस :** इसमें उदर का सतही हिस्सा यानी पेरीटोनियम रक्त शुद्ध करने का काम करता है. इसमें पेट की झिल्ली में सर्जरी द्वारा एक नली डाल कर रखते हैं और इस नली में पेरीटोनियम फ्लूईड डालते हैं. रक्त से प्रवाहित होकर गंदगी भी फ्लूईड में चली आती है. जो नली में रह जाती है उसे निकाल कर रक्त और अन्य गंदगी साफ़ करते हैं. इसे घर पर ख़ुद भी किया जा सकता है. इस प्रक्रिया पर जीवित रहने वाले मरीजों को दिनभर में तीन बार यह कार्य करना पड़ता है. कई लिहाज़ से यह ज़्यादा उपयोगी और आसान है. भागदौड़ वाले आधुनिक जीवनशैली में किडनी के इलाज के लिए यह ज़्यादा उपयुक्त उपचार है. यह सस्ता है और आसानी से घर पर किया जा सकता है. हृदय रोग, कमज़ोर मन, वृद्ध शरीर वाले रोगियों के लिए यह उपचार ही सर्वश्रेख़ माना जाता है.
- **ट्रांसप्लांट :** यह किडनी फेल्योर का स्थायी इलाज है. किडनी का एक बार ट्रांसप्लांट करा लेने के बाद इस बीमारी से छुटकारा पाया जा सकता है. बीमार व्यक्ति के समान ब्लड ग्रुप वाले किसी भी व्यक्ति की स्वस्थ किडनी को ट्रांसप्लांट किया जा सकता है. चूंकि किसी भी व्यक्ति को किडनी दान के लिए तैयार कर पाना कठिन है इसलिए इस प्रक्रिया को अंजाम देना काफ़ी मुश्किल है और इस वजह से महंगा भी. व्यक्ति की जान बचाने के लिए किडनी ट्रांसप्लांट या डायलेसिस का सहारा लेना पड़ता है. चूंकि किडनी दान करने वालों की संख्या काफ़ी कम है, इसलिए डायलेसिस ही इसका सफल उपचार है. ख़राब किडनी वाले व्यक्ति को बचाने के लिए सप्ताह में कम से कम दो या तीन बार डायलेसिस की ज़रूरत होती है. डायलेसिस पर रहने वाला व्यक्ति पांच से 25 वर्ष तक ज़िंदा रह सकता है. इसके लिए उचित खान–पान और सही जीवनशैली अपनाने की ज़रूरत होती है.

दिल्ली स्थित रॉकलैंड अस्पताल की पोषण और आहार विशेषज्ञ डॉ. सुनीता के अनुसार किडनी ख़राब होने पर खान–पान पर विशेष ध्यान देना बेहद ज़रूरी है.

- इन मरीजों को आहार में प्रोटीन कम देने की सलाह दी जाती है. उन्हें जितनी भी प्रोटीन दी जाती है, वह हाई बायलॉजिकल वैल्यू वाली होनी चाहिए.
- इन्हें कैल्सियम और सोडियम भी कम मात्रा में दिया जाता है ताकि शरीर में साल्ट की मात्रा सामान्य बनी रहे.
- ऐसे मरीजों को कोलस्ट्रॉल कम करने की हिदायत दी जाती है इसलिए उन्हें वसायुक्त भोजन नहीं देना चाहिए.
- मरीज भोजन में कच्चे फल, सब्जियां, सूप और सलाद न लें. चाहें तो सब्जियों को पानी में उबाल कर उसका सेवन कर सकते हैं.
- फलों में सेब, पपीता, नाशपाती और अमरूद खाने की मनाही नहीं है.
- आयरन के लिए हरी पत्तेदार सब्जियों की जगह खजूर और सोयाबीन लें.
- अंकुरित बीज और दालें संतुलित मात्रा में ले सकते हैं.
- दिनभर में सिर्फ़ एक बार दाल ले सकते हैं.
- मांसाहार में अंडे की सफ़ेदी और संतुलित मात्रा में चिकन खा सकते हैं.
- ध्यान रहे कि किसी भी प्रकार का डाइट पर अमल करने से पहले डॉक्टर की सलाह ज़रूर लें, क्योंकि हर मरीज का सॉल्ट लेवल और उस हिसाब से खाने की ज़रूरत अलग–अलग होती है.

ritika@chauthiduniya.com

व्यक्ति की जान बचाने के लिए किडनी ट्रांसप्लांट या डायलेसिस का सहारा लेना पड़ता है. चूंकि किडनी दान करने वालों की संख्या काफ़ी कम है, इसलिए डायलेसिस ही इसका सफल उपचार है. ख़राब किडनी वाले व्यक्ति को बचाने के लिए सप्ताह में कम से कम दो या तीन बार डायलेसिस की ज़रूरत होती है. डायलेसिस पर रहने वाला व्यक्ति पांच से 25 वर्ष तक ज़िंदा रह सकता है. इसके लिए उचित खान-पान और सही जीवनशैली अपनाने की ज़रूरत होती है.

हाइपोग्लायसेमिया से बचें

डॉ. विशाल गुप्ता
इंदोक्राइन, डायबटीज मेटाबॉलिक फिजिशियन, जसलोक अस्पताल व रिसर्च सेंटर, मुंबई

हमारी जीवनशैली में नित्य नए परिवर्तन हो रहे हैं. ऐसे में कई घातक रोग हम पर हमला करने के लिए तैयार हैं. लेकिन, घबराने की कोई ज़रूरत नहीं है. उन रोगों के इलाज की संभावनाएं भी तेज़ी से विकसित हो रही हैं. किसी भी इलाज का साइड इफेक्ट होना कोई अचरज की बात नहीं है. ग़लत खानपान और उपचार के ही परिणामों में से एक का नाम है हाइपोग्लायसेमिया. व्यक्ति की वह स्थिति, जिसमें शरीर का ब्लड सुगर सामान्य से कम हो जाता है. दिमाग़ और दूसरे ज़रूरी अंगों की कार्यप्रणाली ब्लड सुगर के स्तर पर निर्भर करती है. जब ब्लड सुगर का स्तर काफ़ी नीचे चला जाता है, तब उक्त अंग ठीक से काम नहीं कर पाते हैं. यह स्थिति सबसे ज़्यादा मधुमेह यानी डायबिटीज के रोगियों में देखने को मिलती है. मीठे से परहेज करने के चक्कर में वे प्राकृतिक मीठे को नज़रअंदाज़ कर देते हैं, जो फलों से मिलती है. इसके अलावा कृत्रिम चीज़ों, जैसे चीनी और चॉकलेट लेना भी फायदेमंद होता है. रोगी को चाहिए कि अपने डॉक्टर के साथ मिलकर वह इस प्रकार से डाइट चार्ट बनवाए या उन चीज़ों को खाने की सलाह ले, जो प्राकृतिक मीठे से भरपूर हों. आम लोगों के अलावा हाइपोग्लायसेमिया की स्थिति दिल, किडनी और लीवर के रोगियों के लिए काफ़ी नुक़सानदायक होती है. लो ब्लड सुगर के प्रभाव से व्यक्ति के व्यवहार में चिड़चिड़ाहट, घबराहट और भिन्नाहट आदि देखने को मिलती है, जो कई बार बेहद ख़तरनाक सिद्ध हो सकती है. ख़ासकर तब, जब आप घर से बाहर हों और कोई आपके साथ न हो. जैसे ड्राइविंग और शॉपिंग करते समय आदि. वैसे हाइपोग्लायसेमिया का आक्रमण किसी भी वक़्त हो सकता है, पर इसकी आशंका सबसे ज़्यादा सुबह के वक्त की होती है. इससे बचने के लिए सुबह के नाश्ते का चार्ट डॉक्टर की सलाह से बनवाएं और उस पर अमल भी करें.

राशिफल

(9 नवंबर–15 नवंबर)

मेष (21 मार्च से 20 अप्रैल)
राजनीतिक दिशा में चल रहा प्रयास सफल होगा. अचानक कहीं यात्रा के योग भी बन रहे हैं. धन, सम्मान, पद और प्रतिष्ठा के क्षेत्र में प्रगति होगी. स्वास्थ्य पर ध्यान दें. आर्थिक दिशा में किया जा रहा प्रयास सफल साबित होगा. भक्ति भावना बढ़ेगी.

वृष (21 अप्रैल से 20 मई)
विवादित मामलों, मकान और संपत्ति आदि के क्षेत्र में चल रहे प्रयासों में सफलता मिलेगी. व्यक्ति विशेष का सहयोग मिलेगा. उच्च रक्तचाप से पीड़ित लोग अपने स्वास्थ्य पर अवश्य ध्यान दें. नए कार्यों को करने की योजना बनाएंगे.

मिथुन (21 मई से 20 जून)
आपके सौम्य व्यवहार से लोग प्रभावित होंगे. रोज़गार के अवसर मिलेंगे. किसी प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी कर रहे हैं तो उसमें सफलता के योग बने हुए हैं. विरोधी परास्त होंगे. आत्मविश्वास में वृद्धि होगी. ईश्वर के प्रति आस्था बढ़ेगी.

कर्क (21 जून से 20 जुलाई)
बेकार की उलझनें और तनाव रहेंगे. आर्थिक एवं व्यवसायिक मामलों में लाभ मिलेगा. व्यस्तता के कारण आप परिवार के लिए समय नहीं निकाल पाएंगे. कार्यक्षेत्र का विस्तार होगा. अपने सम्मान की रक्षा और स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहना बहुत ज़रूरी है.

सिंह (21 जुलाई से 20 अगस्त)
जीविका के क्षेत्र में किया जा रहा प्रयास सफल होगा. मनोरंजन के सुखद अवसर मिलेंगे. जल्दबाजी में निर्णय न लें, क्योंकि जल्दबाजी आपको कष्ट पहुंचा सकती है. बड़े भाई से तनाव मिलेगा, वाणी की सौम्यता बनाए रखें.

कन्या (21 अगस्त से 20 सितंबर)
रुके हुए कार्यों की पूर्ति होगी. वाहन चलाते समय सावधानी बरतें, नहीं तो दुर्घटना हो सकती है. अचानक धन लाभ के योग बने हुए हैं. कुछ भी ऐसा न करें, जिससे आपको बेकार की परेशानी का सामना करना पड़े. कहीं दूर की यात्रा करने से बचें.

तुला (21 सितंबर से 20 अक्टूबर)
सफलताएं आपके अहंकार को बढ़ाएंगी, उससे बचें. जीवनसाथी का भरपूर सहयोग मिलेगा. कोई मूल्यवान वस्तु पाने की अभिलाषा पूरी होगी. अनचाही यात्रा के योग बन रहे हैं. निजी संबंधों में मधुरता आएगी. राजनीतिक दिशा में किया जा रहा प्रयास सफल होगा.

वृश्चिक (21 अक्टूबर से 20 नवंबर)
व्यय की अधिकता रहेगी. गृहोपयोगी वस्तुओं में वृद्धि होगी. सहयोगियों का सहयोग मिलेगा. मांगलिक कार्यों के लिए किया जा रहा प्रयास सफल होगा. ससुराल पक्ष का भरपूर सहयोग मिलेगा. आर्थिक क्षेत्र में नया कुछ करेंगे तो उसमें सफलता मिलेगी.

धनु (21 नवंबर से 20 दिसंबर)
नए अनुबंध प्राप्त होंगे. आर्थिक मामलों में किसी तरह का जोख़िम न उठाएं. स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहने की आवश्यकता है. अपनों और ननिहाल पक्ष का सहयोग मिलेगा. संतान पक्ष की तरफ़ से सुखद समाचार मिल सकता है.

मकर (21 दिसंबर से 20 जनवरी)
व्यर्थ के वाद विवाद में न पड़ें. निकट के संबंध मधुर होंगे. अपने सामान की सुरक्षा के प्रति सचेत रहने की आवश्यकता है. कोई अप्रिय बात हो सकती है. धन ख़र्च बढ़ेगा, नियंत्रण बनाए रखें. मन अशांत रहेगा. किसी अधीनस्थ कर्मचारी या सहयोगी का सहयोग प्राप्त होगा.

कुंभ (21 जनवरी से 20 फरवरी)
परिजनों का भरपूर सहयोग मिलेगा. सोच समझकर ही निर्णय लेना आपके लिए हितकर होगा. नेत्र विकार के प्रति सचेत रहने की आवश्यकता है. शासन सत्ता का सहयोग मिलेगा. निजी संबंध मधुर होंगे.

मीन (21 फरवरी से 20 मार्च)
रोज़गार के अवसर मिलेंगे. कार्य की अधिकता रहेगी. सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ेगी. संतान के व्यवहार से चिंतित हो सकते हैं. छोटी–छोटी बात पर उत्तेजित होकर कार्य न करें. आय–व्यय पर नियंत्रण और वाणी में मधुरता बनाए रखें.

ज्योतिषाचार्य पं. सुदर्शन

हरिद्वार जिसे गंगाद्वार, मायापुरी आदि नामों से भी जाना गया है, में यह कुंभ पर्व आगामी वर्ष 2010 के अप्रैल माह में 13–14 तारीख़ों में संपन्न होगा.

सवा सात पन्नों में फैला प्रेम

अनंत विजय

लगभग तीन साल पहले जब रवींद्र कालिया नया ज्ञानोदय के संपादक होकर दिल्ली आए थे तो साहित्य की दुनिया में हंस और राजेंद्र यादव का सिक्का चल रहा था. जब कालिया नया ज्ञानोदय के संपादक बन कर आए तो राजेंद्र यादव से नाराज़ लेखक और लेखिकाएं कालिया के इर्द–गिर्द इकट्ठा होने लगे. उन्हें लगा कि अब वे राजेंद्र यादव को नीचा दिखाने के लिए रवींद्र कालिया और नया ज्ञानोदय के मंच का इस्तेमाल कर पाएंगे. कुछ लोगों का कहना था कि रवींद्र कालिया दिल्ली की साहित्यिक राजनीति को समझ नहीं पाएंगे और उसके शिकार हो जाएंगे. लेकिन कालिया ने तमाम अटकलों को विराम लगाते हुए न केवल नया ज्ञानोदय को एक नई दिशा और तेवर प्रदान किया, बल्कि अपने संपादकीय कौशल का भी लोहा मनवा लिया और लेखक– लेखिकाओं का एक मज़बूत खेमा खड़ा भी कर लिया. ज्ञानोदय के नियमित पाठकों को इस बात का अंदाज़ा लगाने में दिक़्क़त नहीं होगी. हालांकि बीच में एक दो बार उनकी कुर्सी हिलती नज़र आई, लेकिन तमाम दांवपेंच को धता बताते हुए रवींद्र कालिया नया ज्ञानोदय के संपादक और भारतीय ज्ञानपीठ के निदेशक बने रहे. और, अब तो वह अगले तीन साल के लिए फिर से उसी पद पर नियुक्त कर दिए गए हैं.

रवींद्र कालिया के ज्ञानोदय के संपादक बनने के पहले हंस और राजेंद्र यादव हिंदी साहित्य का एजेंडा सेट किया करते थे, लेकिन जब मई 2007 में कालिया के संपादन में युवा पीढ़ी विशेषांक निकला तो पहली बार ऐसा लगा कि हंस के अलावा कोई और पत्रिका है, जो साहित्य का एजेंडा सेट कर सकती है. संपादक ने दावा किया कि दो हज़ार सात में छपे युवा पीढ़ी विशेषांक की मांग इतनी ज़्यादा हुई थी कि उसे पुनर्मुद्रित करना पड़ा था. नया ज्ञानोदय के उक्त अंक को लेकर उस वक़्त अच्छा ख़ासा बवाल भी मचा था, लेकिन आख़िरकार रचना ही बची रहती है, सो उस अंक का एक स्थायी महत्व बना रहा. लगभग दो वर्ष बाद हंस ने भी अजय नावरिया के संपादन में युवा अंक निकाला, लेकिन हंस का विशेषांक ज्ञानोदय के विशेषांक के आसपास भी नहीं टिक सका.

अब कालिया के संपादन में पिछले चार अंकों से ज्ञानोदय का प्रेम विशेषांक निकल रहा है और संपादक ने एक बार फिर दावा किया है कि विशेषांकों की इस कड़ी के पहले अंक को पाठकों की मांग पर कई बार प्रकाशित करना पड़ रहा है. आज जब हिंदी की साहित्यिक पत्रिकाओं के संपादक पाठकों की कमी और बिक्री न होने का रोना रो रहे हैं, ऐसे में कालिया का यह दावा उनका बड़बोलापन लग सकता है, लेकिन उस पर अविश्वास की कोई वजह दिखाई नहीं देती.

अब बात करें प्रेम महाविशेषांकों की. संपादक ने लिखा– हमने प्रेम विशेषांक प्रकाशित करने की योजना बनाई तो लगा कि हम एक ऐसे सघन वन में प्रवेश कर गए हैं, जहां से बाहर निकल पाना सरल नहीं है. रास्ते बंद हैं सब कूचा–ए–क़ातिल के सिवा. यहीं पर कालिया ने यह संकेत कर दिया था कि प्रेम विशेषांक की सीरीज़ चार अंकों तक जा सकती है. पहले अंक में हिंदी और उर्दू की पांच–पांच प्रेम कहानियों को प्रकाशित किया गया है. इसके अलावा इस अंक में अन्य भारतीय भाषाओं और विदेशी भाषाओं की पांच कालजयी प्रेम कहानियों को प्रकाशित किया गया है, जिनमें चंद्रधर शर्मा गुलेरी, फणीश्वरनाथ रेणु, मन्नू भंडारी, जयशंकर प्रसाद, इस्मत चुगताई, राजेंद्र सिंह बेदी, वैकम मुहम्मद बशीर, चेखव और मार्केस आदि प्रमुख हैं. इस अंक में प्रेम कहानियों के अलावा कालजयी प्रेम कविताओं को भी जगह दी गई है. साथ कविताओं का संयोजन बुद्धिनाथ मिश्र ने किया है और बच्चन से लेकर अनूप अशेष तक की कविताएं संकलित की गई हैं. इनमें अगर कुछ कविताओं को छोड़ भी दिया जाता तो कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता. दूसरा अंक आते–आते ज्ञानोदय के कवर पर भी प्रेम झलकने लगा और एक ख़ूबसूरत महिला की तस्वीर ने यहां क़ब्ज़ा जमा लिया.

सितंबर में प्रेम महाविशेषांक की तीसरी कड़ी प्रकाशित हुई. इसके कवर पर राजकपूर और नर्गिस की छतरी वाली मशहूर तस्वीर है. यह अंक प्रेम के युवा पक्ष पर केंद्रित है. पता नहीं कवर पर यह कैप्शन क्यों लगाया गया है, क्योंकि मेरा मानना है कि प्रेम तो हमेशा युवा ही रहता है. इस अंक में महुआ माजी, अनुज और राकेश मिश्र की कहानी को रेखांकित किया जा सकता है. रवि बुले की कहानी हालांकि थोड़ी उलझी हुई है, लेकिन एक ख़ास वर्ग के पाठकों को यह कहानी पसंद आ सकती है. कविताओं में पंकज राग, यतींद्र मिश्र, पवन करण, प्रज्ञा रावत, हर्षवर्धन, विनय सौरभ और वर्तिका नंदा की कविताएं पठनीय हैं.

प्रेम विशेषांक का चौथा अंक युवा रचनाशीलता पर केंद्रित है और इसमें हिंदी की कुछ और चुनिंदा प्रेम कहानियों को प्रकाशित किया गया है. यहां शर्मिला बोहरा जालान की कहानी सिर्फ़ कॉफी, मनीषा कुलश्रेष्ठ की गंधर्व गाथा, राजुला शाह की नीला और ओम प्रकाश तिवारी की एक लड़की पहेली सी में प्रेम तीव्रता के साथ–साथ अलग–अलग रंग देखे जा सकते हैं. कमलेश्वर की नीली झील छापकर संपादक ने पहले अंक में हुई अपनी भूल को सुधार लिया है. कृष्ण बिहारी की लंबी कहानी स्वेत, स्याम, रतनार छपी है जो बेहद लंबी है और कहीं–कहीं उबाती भी है. इस कहानी को अगर संपादित कर इसकी कथा में अनावश्यक विस्तार की चूलें कस दी जातीं तो यह बेहतर बन सकती थी. इस अंक में कविताएं कमज़ोर हैं और अगर न भी छापी गई होतीं तो कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता. विजय मोहन सिंह के सारगर्भित लेख भी इन अंकों में हैं. साथ ही कांति कुमार जैन और लाल बहादुर वर्मा ने भी प्रेम को केंद्र में रखकर विद्वतापूर्ण आलेख लिखे हैं. इन चार अंकों पर अगर समग्रता से विचार करें तो कालिया का संपादकीय कौशल तो सामने आता ही है, साथ ही बाजार को पहचानने और उसका अपने हित में इस्तेमाल करने की संपादकीय दृष्टि भी सामने आती है. कालिया के संपादन में जब वर्तमान साहित्य का कहानी महाविशेषांक छपा था, तब भी उन दोनों अंकों की ख़ासी चर्चा हुई थी और साहित्य की दुनिया में वे अंक अब भी मील के पत्थर हैं. इन अंकों के बाद यह देखना दिलचस्प होगा कि रवींद्र कालिया स्त्री विमर्श पर केंद्रित कोई विशेषांक निकाल कर सीधे–सीधे राजेंद्र यादव को चुनौती देते हैं या फिर इसी तरह साहित्य का एजेंडा सेट कर आनंदित होते रहते हैं.

ही शरतचंद्र चट्टोपाध्याय के कालजयी उपन्यास देवदास का नया अनुवाद युवा कथाकार और कालिया के प्रिय कुणाल सिंह ने किया है. इस नए अनुवाद में कुणाल सिंह ने कोई वैल्यू एडिशन किया हो, ऐसा पहली नज़र में लगता नहीं है.

दूसरे अंक में उपन्यासकार और महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय के कुलपति विभूति नारायण राय का नया उपन्यास प्रेम की भूतकथा प्रकाशित हुआ है. विभूति नारायण राय का यह उपन्यास इस अंक की उपलब्धि है. सौ साल पहले के मसूरी को केंद्र में रखकर लिखा गया यह उपन्यास बेहतर बन पड़ा है. पाठकों को विभूति के इस उपन्यास में प्रेम की एक नई अनुभूति का अहसास होगा और मुझे लगता है कि आने वाले दिनों में यह उपन्यास पाठकों के साथ–साथ आलोचकों का ध्यान भी अपनी ओर खींचेगा. इस अंक में मधु कांकरिया, राजेंद्रराव और रजनी गुप्ता की प्रेम कहानियां उल्लेखनीय हैं.

(लेखक आईबीएन7 से जुड़े हैं.)

feedback@chauthiduniya.com

धर्म को व्यवहारिक नज़रिए से देखें

जनसाधारण ने जिस धर्म या जीवन पद्धति को हिंदू धर्म नाम दिया है, क्या आपने कभी इस बारे में विचार किया है कि यह धर्म या जीवन पद्धति क्या है? या फिर क्या आपने इस पर गौर किया है कि जब हम हिंदू धर्म की बात करते हैं तो वास्तव में किस धर्म की बात कर रहे होते हैं? सच तो यह है कि हिंदू धर्म का कहीं कोई अस्तित्व ही नहीं है. हिंदू धर्म का उल्लेख किसी भी प्राचीन वैदिक ग्रंथ या संस्कृत साहित्य में नहीं है. वैदिक ग्रंथों की तो बात ही छोड़ दें, मध्यकाल से पहले किसी स्थानीय भाषा या बोली तक में धर्म के रूप में हिंदू धर्म की चर्चा नहीं की गई है. दरअसल, जब हम हिंदू धर्म की बात करते हैं तो हमारा आशय सनातन धर्म होता है. प्राचीनतम वैदिक ग्रंथ ऋगवेद में भी इसी नाम का उल्लेख है.

सनातन धर्म विश्व का प्राचीनतम धर्म है. शायद यही वजह है कि इसे आदि धर्म की उपमा दी गई है. पूरी दुनिया में इसके करोड़ों अनुयायी हैं. सनातन धर्म कितना प्राचीन है, इस बारे में किसी को कुछ भी पता नहीं है. इसलिए किसी को इस बारे में कोई जानकारी नहीं है कि इस धर्म के प्रवर्तक कौन हैं. सनातन धर्म कई धर्मों की जननी रहा है. विश्व के कई देशों में बौद्ध, जैन और सिख धर्म के अनुयायी हैं. इन सभी धर्मों का उद्भव सनातन धर्म से ही हुआ है. सनातन धर्म में धर्म की व्याख्या धारयति इति धर्मः के रूप में की गई है. हम जो धारण करते हैं वही हमारे लिए धर्म है. सैनिकों का धर्म देश की रक्षा करना है तो गुरु का धर्म ज्ञान का प्रसार. प्रत्येक व्यक्ति से धर्म पालन की अपेक्षा की जाती है. हां, धर्म नीति सम्मत हो, विधि सम्मत हो और समाज सम्मत हो, हमें इस बात का ध्यान अवश्य रखना चाहिए. किसी भी धर्म की यही प्रमुख कसौटियां हैं, जिन पर खरा उतरने के बाद ही वह समुदाय विशेष को कोई सच्ची राह दिखा सकता है.

सनातन धर्म या हिंदू धर्म की कई तरह से व्याख्या की जाती रही है. खुद को हिंदू धर्म का पहरुआ और हिंदू हितपोषक बताने वाले इसकी जैसी व्याख्या करते हैं, वह इस धर्म के मर्म से कतई मेल नहीं खाती है. सनातन धर्म किसी व्यक्ति, विचारधारा या ग्रंथ विशेष से न तो नियंत्रित होता है और न ही निर्देशित. आप कह सकते हैं कि धर्म में ऐसी स्वतंत्रता अन्यत्र दुर्लभ है. लेकिन धर्म को अपनी जागीर मानने वाले आधुनिक धर्मगुरुओं के सोचने और समझने का तरीका कुछ अलग है. वे वेद, पुराण और उपनिषद सभी को एक ही चश्मे से देखते और एक ही तराजू पर तौलते हैं. रामायण और महाभारत से आगे उन्होंने न तो तथ्यों की तलाश की और न ही कभी इसकी आवश्यकता ही समझी. इस वजह से धर्म को लेकर अक्सर भ्रांतियां पैदा होती रहती हैं और आमजन सही जानकारी से वंचित हैं.

सनातन धर्म वस्तुतः जीवन पद्धति है. इसलिए कह सकते हैं कि धर्म भी हमारी संस्कृति का ही अभिन्न हिस्सा है. किसी भी संस्कृति में संप्रदाय की संकीर्णता नहीं होती. जाहिर है कि सनातन धर्म भी इस संकीर्णता से दूर है. सर्वधर्म समभाव और वसुधैव कुटुंबकम की भावना, जिसकी आज वैश्विक संदर्भों में चर्चा की जाती है, इसके मूल में निहित है. शांतिपूर्ण सहअस्तित्व, जिसकी दुहाई आज पूरी दुनिया देती है, सनातन धर्म अनंतकाल से इस भावना का पोषक रहा है.

सनातन धर्म में कहीं से भी विचारों के टकराव के लिए जगह नहीं है. इसलिए सनातन धर्म में कई विचारधाराएं समानांतर रूप से एक साथ दिखाई देती हैं. ईश्वरवाद, एकेश्वरवाद या अनेकेश्वरवाद की बहस को जानें दें, हम ईश्वर को दसों दिशाओं में विराजमान मानते हैं. पत्थर को अगर हम ब्रह्म स्वरूप मानते हैं तो पशुओं में भी ईश्वर का अस्तित्व तलाशते हैं. हवा–आग, मेघ–वर्षा, नदी–पर्वत, पेड़–पौधे, अन्न–जल, सजीव–निर्जीव, ईश्वर को सभी में विद्यमान मानते हैं. आधुनिक नजरिए से देखें तो सनातन धर्म प्रकृति और पर्यावरण के सबसे ज्यादा करीब है.

और, इसीलिए आज इस बात की कहीं ज्यादा जरूरत है कि इस प्राचीन सनातन धर्म को व्यवहारिक नजरिए से न सिर्फ देखा जाना चाहिए, बल्कि इसका व्यापक प्रचार–प्रसार भी किया जाना चाहिए.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

क्या है कुंभ? क्यों है कुंभ? कहां है कुंभ?

डॉ.कमलकांत बुधकर

दुनिया का सबसे बड़ा जन–जमावड़ा माना जाता है देश में लगने वाले चार कुंभ मेलों को. उक्त चार मेले चार तीर्थनगरों में आयोजित होते हैं. गंगा के तट पर हरिद्वार में, गंगा, यमुना और सरस्वती के संगम पर तीर्थराज प्रयाग में, क्षिप्रा के तट पर उज्जैन में और गौतमी–गंगा कही जाने वाली गोदावरी के तट पर नासिक में उक्त कुंभ महापर्व हर बारहवें वर्ष आते हैं. यूं तो सारी दुनिया में ही इस पर्व को लेकर कौतूहल और जिज्ञासा है, पर हमारे देश की नई पीढ़ी के युवक–युवतियों में किसी को भी इस महापर्व की अधिक जानकारी नहीं है! लोग सिर्फ़ इतना ही जानते हैं कि धार्मिक लोग पुण्य कमाने के लिए एकत्र होते हैं, जिनमें गांव–देहात की बहुसंख्या होती है. देखा जाए तो यह बात किसी हद तक सच भी है, क्योंकि यह महापर्व धार्मिक आस्था की अभिव्यक्ति करते हैं. परंपरा के रूप में चले आ रहे लोकविश्वास को मुखरित करते हैं.

वैसे कुंभ सामान्य वाणिज्य या पशु मेलों की तरह का मेला नहीं है कि लोग आए, व्यापार किया, मनोरंजन किया और खा–पीकर चले गए. हालांकि अब समय के साथ–साथ इसका यह स्वरूप भी हो चला है, पर मूलत: तो कुंभ एक धार्मिक स्नानपर्व हैं, जो ज्योतिषीय दृष्टि से बृहस्पति, सूर्य और चंद्र के विशेष राशि और आकाशीय स्थितियों में आने पर ही आयोजित होते हैं. इनके पीछे हमारे समाज में वैज्ञानिकों और मनीषी ऋषि–मुनियों का गहन सामाजिक चिंतन भी है, जो व्यक्ति से व्यक्ति को जोड़ता है और धार्मिक चेतना से संपन्न एक विशिष्ट आस्तिक समाज का निर्माण करता है. इसमें जोगियों का भोगियों से संवाद होता है! इसीलिए प्रति बारहवें वर्ष विभिन्न स्थलों पर कुंभ का आयोजन हमारे मनीषियों–चिंतकों ने कई दृष्टियों से आरंभ किया. आज जब हम अपनी इस विराट परंपरा को पूरे गौरव से निभाते आ रहे हैं तो इसके आरंभ होने के विभिन्न कारणों और आधारों के परिप्रेक्ष्य में कुंभ की पौराणिकता, खगोल शास्त्रीयता, ऐतिहासिकता और सामाजिकता पर चिंतन अपेक्षित है.

कुंभ पर्व नदियों के किनारों पर ही आयोजित किए जाते रहे हैं. जल मानव जीवन की अनिवार्यता और आवश्यकता है. शरीर निर्माण के पांच प्रमुख तत्वों में से वह एक है. भारतीय चिंतन परंपरा मानती है कि बिना जल के मानव जीवन अकल्पनीय ही है. इसीलिए दुनिया में मानव बस्तियों की शुरुआत नदी तटों से होना सहज स्वाभाविक ही है. नदियों के किनारे ही मानव बस्तियां बसाने और वहां पर्वों–मेलों के आयोजन का रिवाज़ रहा है. हमारे यहां तो जीवन के लिए अनिवार्य पांच तत्वों को पूजनीय मानकर इन्हें ईश्वरीय महत्ता दी गई है. कहा गया है कि क्षिति जल पावक गगन समीरा, पांच तत्व मिल बना शरीरा. यानी धरती का ठोसपन, आकाश की शून्यता, जल की तरलता और प्रवहमानता, वायु के भीतर का प्राणतत्व तथा अग्नि की ऊष्मा व ऊर्जा से मिलकर ही मनुष्य शरीर बनता है.

जल तत्व की विशेषता को जीवन का पर्याय बताते हुए महात्मा कबीर ने तो इस शरीर को ही कुंभ कहा और इसके बाहर तथा भीतर दोनों तरफ़ परमात्मा तत्व के दर्शन किए. उन्होंने लिखा कि– जल में कुंभ, कुंभ में जल है बाहर भीतर पानी, फूटा कुंभ जल जलहिं समाना यह तत कथौ गियानी. यानी इस शरीर रूपी कुंभ के भीतर आत्मा और बाहर परमात्मा रूपी जल रहता है. जब पूर्णायु होने पर शरीर का यह कुंभ फूटता है, तब आत्मा–परमात्मा का परस्पर साक्षात होता है. अगर शरीर कुंभों का जमावड़ा नदी तटों पर करवाने और वहां परमात्मा चिंतन की परंपरा इन महापर्वों के माध्यम से हमारे पुरखों द्वारा डाली गई है तो किसी को आश्चर्य नहीं होना चाहिए.

हरिद्वार जिसे गंगाद्वार, मायापुरी आदि नामों से भी जाना गया है, में यह कुंभ पर्व आगामी वर्ष 2010 के अप्रैल माह में 13–14 तारीख़ों में संपन्न होगा. ढेर सारे अन्य शास्त्रोक्त प्रमाणों के साथ–साथ कुंभ पर्व की परंपरा के एक आधार के रूप में विष्णुयाग की रोचक कलशोत्पत्ति कथा जुड़ी है. बहुचर्चित इस कलशोत्पत्ति कथा के अनुसार, उत्तर में हिमालय पर्वत के समीप क्षीरसागर को मथने के लिए देवों और दैत्यों ने मिलकर एक साहसिक अभियान संपन्न किया था. कच्छप अवतार भगवान विष्णु की पीठ पर विराट मंदराचल को मथानी बनाकर रखा गया. नागराज वासुकि को रस्सी बनाया गया और एक ओर से देवों ने तथा दूसरी ओर से दैत्यों ने सागर को मथना शुरू किया. इस मंथन से चौदह रत्न निकले– विष, वारुणि, पुष्पक विमान, ऐरावत हाथी, उच्चैश्रवा अश्व, लक्ष्मी, रंभा, चंद्रमा, कौस्तुभमणि, कामधेनु गाय, विश्वकर्मा, धंवन्तरि और अमृत कुंभ. सबसे अंत में धंवन्तरि ही अमृत से भरे कुंभ को लेकर अवतरित हुए.

इस अमृतकुंभ को देखते ही इंद्र का पुत्र जयंत इस पर झपटा और धंवन्तरि के हाथ से अमृतकुंभ छीनकर भाग निकला. देवता कुंभ की रक्षा के लिए सन्नद्ध हुए तो दैत्य इस घटना से बौख़ला कर जयंत से कुंभ छीनने के लिए भागे. जयंत बारह दिनों तक, जो कि मनुष्यों के लिए बारह वर्ष माने जाते हैं, कुंभ को लिए–लिए भागता रहा. इस अवधि में उसने जिन बारह स्थानों पर वह कलश रखा, उन्हीं बारह स्थानों पर बाद में कुंभ पर्व मनाया जाने लगा. उक्त बारह स्थानों में चार तो पृथ्वी पर, वह भी भारत में ही हैं. शेष आठ स्थान देवलोकों में माने जाते हैं. चूंकि देवगुरु बृहस्पति, सूर्य और चंद्रमा ने उक्त बारह दिनों में अलग–अलग स्थितियों में कुंभ की रक्षा की थी, अत: बृहस्पति, सूर्य और चंद्रमा की विशिष्ट स्थितियां ही विभिन्न स्थलों पर कुंभ का योग लाती हैं. इसी कलशोत्पत्ति कथा के अंत में बताया गया है कि मेष में सूर्य और कुंभ राशि में बृहस्पति होने से गंगाद्वार यानी हरिद्वार में कुंभ का योग उपस्थित होता है.

जयंत द्वारा अमृत कुंभ को लेकर भागने की घटना के अलावा हमारी पुराकथा के साथ एक और किंवदंती इस संदर्भ में प्रचलित है और वह है गरुड़ द्वारा कुंभ को उड़ा ले जाने की बात. हालांकि स्पष्ट रूप से इस बात का उल्लेख लेखक को नहीं मिला है, पर लोकचर्चा है कि सागर मंथन के बाद अंत में धंवन्तरि अमृत कुंभ लेकर प्रकट हुए तो इस कुंभ के लिए छीनाझपटी हुई. देवों और दैत्यों के बीच विवाद बढ़ा तो भगवान विश्वमोहिनी रूप लेकर आए. उन्होंने मध्यस्थ बनकर अमृत कुंभ स्वयं ले लिया और वितरण करना आरंभ किया. उन्होंने पहले से ही निश्चय कर रखा था कि यह अमृत केवल देवताओं को ही मिलना चाहिए. अत: उन्होंने देवताओं की पंक्ति में ही सारा अमृत समाप्त कर ख़ाली कलश फेंक दिया. इस कलश को गरुड़ ले उड़े और थोड़ी–बहुत शेष बची बूंदों को उन्होंने चार स्थलों पर गिरा दिया.

इसके अतिरिक्त शिवपुराण, स्कंदपुराण, ब्रह्मांडपुराण, पद्मपुराण, ब्रह्मवैवर्त पुराण, तीर्थदर्पण और तीर्थेंदुशेखर आदि ग्रंथों में कुंभ स्नान के महत्व को बताते हैं. हरिद्वार में जो कुंभ होता है, वस्तुत: वह गुरु के कुंभ राशि में होने यानी कुंभस्थ होने पर ही होता है. इसके लिए विद्वज्जन धर्मसाधन, मनुपर्व और विष्णुयाग आदि को प्रमाण मानते हैं. श्रीमद्भागवत, विष्णुपुराण, महाभारत, वाल्मीकि रामायण आदि ग्रंथों में भी सागर मंथन, अमृत कुंभ का धंवन्तरि के हाथों में प्रकट होना और विश्वमोहिनी वेश में महाविष्णु द्वारा इसके वितरण की तो चर्चा है, पर कहीं भी जयंत या गरुड़ द्वारा इस अमृत कुंभ को लेकर भागने और जगह–जगह रखने की चर्चा नहीं है.

इसी तरह मत्स्य, कूर्म, गरुड़, पद्म और नारदीय पुराणों में गंगा स्नान का महत्व तो लिखा गया है और इसके साथ ही लिखा गया है गंगाद्वार, हरिद्वार और प्रयाग आदि तीर्थों का महत्व, पर इनमें कहीं भी कुंभ पर्व की चर्चा नहीं है. हां, कुंभ की चर्चा अथर्ववेद में अवश्य आई है. इसमें कहा गया है कि ब्रह्माजी कहते हैं कि हे मनुष्यों! मैं भोजन, बुद्धि एवं पोषण साधनों से पूर्ण पृथ्वी को पूर्ण करने वाले चार कुंभों को, कुंभ पर्वों को, चार स्थानों में प्रदान करता हूं.

ज्योतिषीय पक्ष को लेकर दो प्रमुख बातों की ओर भी दृष्टिपात कर लेना उचित है. मान्यता है कि देश के चार स्थानों पर क्रमश: हर तीसरे बरस कुंभ पर्व होता है. यहां यह समझ लेना आवश्यक है कि हरिद्वार में जिस वर्ष कुंभ होता है, उसके नवें वर्ष कोई पूर्ण कुंभ कहीं नहीं होता है. हरिद्वार के तीसरे वर्ष प्रयाग में वृषस्थ कुंभ होता है, छठे वर्ष उज्जैन में सिंहस्थ कुंभ होता है और इसी वर्ष सर्दियों में नासिक में सिंहस्थ कुंभ होता है. दूसरी बात यह है कि कुंभ तो वस्तुत: हरिद्वार में ही होता है और संभवत: यहीं से यह परंपरा आरंभ हुई होगी, क्योंकि शेष तीन स्थलों पर बृहस्पति कुंभस्थ होता ही नहीं है. तात्पर्य यह है कि कुंभ विशेषण इस महापर्व के लिए हरिद्वार के साथ जुड़कर ही अधिक सटीक बैठता है.

चर्चा कुंभनगर की

kk@budhkar.in

भारत में सोनी एरिक्सन के अध्यक्ष अनिल सेठी ने कहा कि सेशियो, आइनो और यारी स्मार्ट फोन के क्षेत्र में नया ट्रेंड स्थापित करेगा और यूजर्स निश्चित तौर पर इसे पसंद करेंगे.

माइक्रोसॉफ्ट का पावरफुल विंडोज-007

माइक्रोसॉफ्ट का बहुप्रतीक्षित ऑपरेटिंग सिस्टम (ओएस) विंडो-7 आख़िरकार बाज़ार में आ ही गया. माइक्रोसॉफ्ट इस ऑपरेटिंग सिस्टम को लांच करने के लिए हां और न के बीच में फंसी हुई थी. लेकिन देर से ही सही, कंपनी ने विंडोज-7 को लांच कर दिया. हालांकि कंपनी ने जिस जोश-ओ-खरोश से ऑपरेटिंग सिस्टम विस्टा को बाज़ार में उतारा था. उस लिहाज़ से विस्टा कंपनी के साथ-साथ यूजर्स की उम्मीदों पर ख़रा नहीं उतर पाया. विस्टा के निराशाजनक प्रदर्शन के बाद माइक्रोसॉफ्ट को विंडोज-7 पर काफी भरोसा है और उसे विश्वास है कि यह पीसी बाज़ार में विंडोज-7 यूजर्स की ज़रूरतों को पूरा करेगा.

सॉफ्टवेयर क्षेत्र की इस दिग्गज कंपनी ने अपने इस नए ऑपरेटिंग सिस्टम में यूजर्स की ज़रूरतों के साथ-साथ कंप्यूटर का भी ध्यान रखा है. विंडोज-7 न सिर्फ़ प्रोफेशनल, बल्कि इस क्षेत्र की कंपनियों के लिए भी बहुत मायने रखता है. यह काफी तेज़ी से काम करता है. साथ ही कंपनी ने इसे और अधिक सुरक्षित बनाने पर ध्यान दिया है. इसे काफी सरल बनाने की कोशिश की गई है, जिससे यूजर्स इसका इस्तेमाल आसानी से कर सकें . भारत में माइक्रोसॉफ्ट के चेयरमैन रवि वेंकटेशन ने बताया कि यह काफी सरल और अच्छी क्वालिटी वाला ऑपरेटिंग सिस्टम है. इसे इस तरह से डिज़ाइन किया गया है कि ऊर्जा की खपत भी कम हो. इतना ही नहीं, इसमें कई ऐसे फीचर्स हैं, जो यूजर्स को निश्चित तौर पर अपनी ओर आकर्षित करेंगे. ऐसा हमारा नहीं, बल्कि कंपनी का कहना है. विंडोज-7 में जंप लिस्ट, स्नैप, ऐरोशेक, पिन, लाइव टास्कबार प्रिव्यू, फास्ट बूटिंग और टच स्क्रीन जैसे कई नए फीचर्स शामिल किए गए हैं. आइए, अब हम विंडोज-7 के नए फीचर्स पर एक नज़र डालते हैं.

जंप लिस्ट

हमारे कंप्यूटर पर सबसे नीचे एक स्टार्ट बटन होता है. जब हम उस पर क्लिक करते हैं तो हमारे सामने प्रोग्राम की पूरी सूची आ जाती है, जिसमें कई सारे प्रोग्राम होते हैं और अपने काम के प्रोग्राम को खोजने में हमारा काफी समय लग जाता है. जंप लिस्ट एक नया फीचर है. इसे आप टास्कबार पर सेट कर सकते हैं और इसमें वे सारे प्रोग्राम सूचीबद्ध कर सकते हैं, जिसका यूज़ आप हमेशा करते हैं.

स्नैप

वर्ड फाइल पर आप दो फाइलों को एक साथ खोलकर स्क्रीन पर आधे-आधे भागों में बांट सकते हैं. इसके लिए आपको थोड़ी सी मेहनत करनी होगी. वह यह कि बॉर्डर को कर्सर से पकड़कर ड्रैग करना होगा. इसे आप वर्ड फाइल पर ही नहीं, इंटरनेट पर भी आज़मा सकते हैं.

एरोशेक

हम में से कई लोग कंप्यूटर पर कई सारी विंडोज खोलकर एक साथ काम करते हैं, लेकिन जब आपको सिर्फ़ एक ही फाइल पर फोकस करना हो तो बड़ी दिक़्क़त होती है. एरोशेक फीचर से आप बस काम की विंडो पर माउस रखकर क्लिक करेंगे और उसे होल्ड करके जोर से हिलाएंगे तो सभी फाइलें ख़ुद-बख़ुद मिनिमाइज़ हो जाएंगी.

पिन

काम को आसान करने के लिए पिन काफी अहम भूमिका निभाता है. आपका कोई ऐसा प्रोग्राम, जिस पर आप हमेशा काम करते हैं. इसे और हल्का करने के लिए आप कर्सर से ड्रैग कर टास्कबार ले आइए. इसका आइकन टास्कबार पर बन जाएगा. उसके बाद जब आपको इसका इस्तेमाल करना हो तो आपको सिर्फ़ आइकन पर क्लिक करना होगा.

लाइव टास्कबार प्रिव्यू

अभी हम जिस ऑपरेटिंग सिस्टम पर काम करते हैं, उसमें टास्क बार पर जो भी फाइलें मिनिमाइज़ होती हैं, उन्हें देखने के लिए उन पर क्लिक करने के बाद फुल स्क्रीन पर खोलना पड़ता है, लेकिन विंडोज-7 से यह काम आसान हो जाएगा. इसके लिए आपको टास्क बार पर मौज़ूद मिनिमाइज़ फाइल पर बस कर्सर लाना होगा. कर्सर ले जाते ही एक छोटी सी स्क्रीन उभरेगी. यहां पर आप लाइव प्रिव्यू भी देख सकते हैं.

फास्ट बूटिंग

विंडोज-7 का सबसे बढ़िया फीचर फास्ट बूटिंग है. मतलब यह कि कंप्यूटर ऑन करने का बटन दबाते ही वह चालू हो जाएगा.

टचस्क्रीन:

विंडोज-7 पर आपको की-बोर्ड या माउस की ज़रूरत ही नहीं पड़ेगी. फोटो को आप अंगुली की मदद से छोटा-बड़ा कर सकते हैं. वैसे अब तक विंडोज में सिंगल टच था, लेकिन विंडोज-7 ने मल्टी टच का फीचर पहली बार दिया है.

माइक्रोसॉफ्ट ने अपना बहुप्रतीक्षित ऑपरेटिंग सिस्टम लांच कर दिया है. इसी के साथ ही कंप्यूटर बनाने वाली कंपनियों ने यह घोषणा की है कि अब उनकी अधिकतर डिवाइसेज विंडोज-7 से लैस होंगी. एक बात और कि यदि अब भी आपका कंप्यूटर विंडोज एक्सपी या विस्टा पर चल रहा है तो उसे अपग्रेड करना होगा. हालांकि विस्टा यूजर्स के लिए अपग्रेड करना काफ़ी सरल होगा. जबकि एक्सपी वालों के लिए थोड़ी दिक़्क़त होगी. मतलब यह कि एक्सपी वालों को पहले डाटा किसी दूसरे पार्टिशन या अन्य डेस्क में सेव करना होगा, क्योंकि जब आप अपग्रेड करेंगे तो पुरानी फाइल सेव नहीं हो पाएगी. सूत्रों के मुताबिक़, विंडोज-7 होम बेसिक मॉडल की क़ीमत क़रीब 5800 रुपए, प्रीमियम की 8000 रुपए और अल्टीमेट की क़रीब 11000 रुपए है. माइक्रोसॉफ्ट इंडिया के चेयरमैन रवि वेंकटेशन ने बताया कि यह लांच हमारी कंपनी के लिए ही नहीं, बल्कि पूरी इंडस्ट्री के लिए काफ़ी अहम है. दुनिया भर में क़रीब 80 लाख टेस्टर्स ने इसे परखा है और 90 फ़ीसदी ने इसे अच्छी रेटिंग दी है. भारत में 1000 उद्यमी विंडोज-7 को लागू कर रहे हैं.

feedback@chauthiduniya.com

सैमसंग का नया ओमनीया हैंडसेट

हर कंपनी यूजर्स के लिए नए-नए फीचर्स के साथ नए मोबाइल फोन बाज़ार में उतार रही है. कंपनी की कोशिश यही रहती है कि ज़्यादा से ज़्यादा लोग उसके प्रोडक्ट को ख़रीदें. इस होड़ में हर कंपनी दूसरी कंपनी से आगे निकलना चाहती है. इसी आपाधापी में सैमसंग ने ओमनीया सीरीज़ के हैंडसेट को और अधिक मज़बूत करने के लिए ओमनीया द्वितीय जीटी आई 8000 को भारतीय बाज़ार में उतारा है. हालांकि यह देखने में बिल्कुल सैमसंग जेट मोबाइल की तरह लगता है, लेकिन फीचर्स के मामले में यह उससे काफी उम्दा है.

इसकी लांचिंग के मौक़े पर सैमसंग इलेक्ट्रॉनिक के आईटी एंड टेलीकॉम डायरेक्टर रंजीत यादव ने कहा कि इसे यूजर्स के अनुभव के आधार पर डिज़ाइन किया गया है. यह निश्चित तौर पर यूजर्स की उम्मीदों पर ख़रा उतरेगा, क्योंकि इसमें लेटेस्ट टेक्नोलॉजी का इस्तेमाल किया गया है. यह मोबाइल विंडोज 6.1 प्लेटफॉर्म पर आधारित है. ओमनीया द्वितीय फुल टच स्क्रीन वाला सैमसंग का सबसे नया मोबाइल है.

अब हम आपको इसके फीचर्स के बारे में बता दें. इसमें 3.7 इंच का एएमओएलईडी टच स्क्रीन है. 65 के कॉलर्स हैं. इसके साथ ही 3 जी, ईडीजीई, जीपीआरएस, वाई-फाई, जीपीएस, ए2डीपी, यूएसबी के साथ ब्ल्यू टूथ, ड्यूल लीड फ्लैश फीचर्स के साथ पांच मेगापिक्सल का कैमरा, स्टीरियो एफएम रेडियो, रिकॉर्डिंग, वीडियो सपोर्ट, टीवी आउटपुट और आठ जीबी का एक इंटरनल मैमोरी और माइक्रो एसडी कार्ड स्लॉट आदि प्रमुख हैं.

इसके अलावा इसमें मोशन इंबिल्ड फीचर्स भी शामिल हैं, जिसमें 3 डी फोटो एलबम, वीडियो लाइब्रेरी, म्यूज़िक लाइब्रेरी, ब्राउज़र बुकमार्क्स और एफएम रेडियो यूआई है. इसके ज़रिए आप सोशल साइट जैसे-फेसबुक, फ्लिकर, माई स्पेस से फोटो और प्रसिद्ध वीडियो भी डाउनलोड कर सकते हैं. इस फोन के लिए आपको 28,990 रुपये चुकाने होंगे.

लांचिंग के मौक़े पर सैमसंग इलेक्ट्रॉनिक के आईटी एंड टेलीकॉम डायरेक्टर रंजीत यादव ने कहा कि इसे यूजर्स के अनुभव के आधार पर डिज़ाइन किया गया है. यह निश्चित तौर पर यूजर्स की उम्मीदों पर ख़रा उतरेगा, क्योंकि इसमें लेटेस्ट टेक्नोलॉजी का इस्तेमाल किया गया है. यह मोबाइल विंडोज 6.1 प्लेटफॉर्म पर आधारित है. ओमनीया द्वितीय फुल टच स्क्रीन वाला सैमसंग का सबसे नया मोबाइल है.

सोनी एरिक्सन ने तीन नए स्मार्ट फोन लांच किए

मोबाइल फोन बनाने वाली कंपनी सोनी एरिक्सन ने भारतीय बाज़ार में तीन नए स्मार्ट फोन उतारे हैं. जिसका लुक काफी अट्रैक्टिव है. फीचर्स भी कमाल के हैं. इसकी क़ीमत 16950 रुपए से लेकर 35950 रुपए तक है. भारत में सोनी एरिक्सन के अध्यक्ष अनिल सेठी ने कहा कि सेशियो, आइनो और यारी स्मार्ट फोन के क्षेत्र में नया ट्रेंड स्थापित करेगा और यूजर्स निश्चित तौर पर इसे पसंद करेंगे.

उन्होंने कहा कि कंपनी सेल बढ़ाने के लिए अगले दो-तीन साल तक अपना ध्यान स्मार्ट फोन पर ही फोकस करेगी. ताकि मोबाइल बाज़ार पर उसका क़ब्ज़ा हो सके. सेठी ने कहा कि एक बार 3 जी का वितरण हो गया तो कंपनी और अधिक फीचर्स और नेटवर्क पर ध्यान देगी. सेशियो की क़ीमत 35950 रुपए है.

इसमें 3.5 इंच का स्क्रीन और 12.1 मेगा पिक्सल का कैमरा लगा हुआ है. आइनो वाई-फाई कनेक्शन से लैस है. इसमें आठ मेगापिक्सल का कैमरा लगा हुआ है. इसकी क़ीमत 28950 रुपए है.

यारी में पांच मेगापिक्सल का कैमरा लगा हुआ है और इसकी क़ीमत 16950 रुपया है.

फोटो-प्रभात पाण्डेय

सोनी एरिक्सन के स्मार्ट फोन को लांच करतीं मॉडल्स

निकॉन का डी-5000 कैमरा

थोड़ा लेफ्ट, नहीं थोड़ा और लेफ्ट, बस अब बिल्कुल सही फ्रेम बन रहा है. और, फिर क्लिक की एक आवाज़ सुनते ही आप ख़ुश हो जाते होंगे. लेकिन जब फोटो सामने आती होगी तो निराश हो जाते होंगे. इसलिए हर फोटोग्राफर को अच्छी क्वालिटी की फोटो पाने के लिए हमेशा कुछ नया करने की सोचता रहता है. कभी-कभी ख़ुद की ग़लती तो कभी-कभी कैमरे की कमी के चलते फोटो सही नहीं आ पाती है और वे काफ़ी मायूस हो जाते हैं. लेकिन, अब उन्हें मायूस होने की ज़रूरत नहीं है, क्योंकि ट्रेंड फोटोग्राफर के लिए निकॉन ने एक नया कैमरा डी-5000 बाज़ार में उतारा है. इसमें बहुत सारे नए फीचर्स शामिल किए गए हैं, जिससे निश्चित तौर पर फोटोग्राफी के क्षेत्र में बेहतर परिणाम देखने को मिलेंगे.

कुछ वर्षों पहले निकॉन ने डी-40 और डी-60 कैमरे लांच किए थे. दरअसल नया कैमरा डी-5000 उसी का वृहद रूप है. इस कैमरे में वे सारे फीचर्स मौजूद हैं, जो डी-40 और डी-60 में हैं. इसके अलावा इसमें कई ऐसे फीचर्स हैं, जो ट्रेंड फोटोग्राफरों को अपनी ओर आकर्षित करेंगे. इसे कुछ इस तरह से डिज़ाइन किया गया है कि यह देखने में बिल्कुल डी-60 जैसा लगता है. हालांकि इसमें फीचर्स कमोबेश डी-60 जैसे ही हैं, फिर भी डी-5000 में कुछ नए फीचर्स दिए गए हैं. जहां तक समानता की बात है तो दोनों कैमरों में बटन प्लेसमेंट लगभग एक जैसा है. डी-5000 में 12.3 मेगा पिक्सल का सीएमओएस सेंसर लगा हुआ है. डी-90 में भी इसी तरह का सेंसर लगा हुआ है. इससे पिक्चर क्वालिटी में सुधार आता है.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

विज्ञापन हेतु संपर्क करें : 9811205225 email : advt@chauthiduniya.com

चाइना ओपन में सेरेना ने सफीना को हराकर शीर्ष पायदान से बेदख़ल कर दिया. इन सबके बीच सफीना को शीर्ष वरीयता दिए जाने की काफ़ी आलोचना भी हुई. दरअसल, सफीना ने अभी तक एक भी ग्रैंड स्लेम ख़िताब नहीं जीता है.

बाहर करने का बहाना

चयनकर्ताओं का रवैया गांगुली के लिए कैसा था, यह जगज़ाहिर है. अब चयनकर्ताओं के निशाने पर राहुल द्रविड़ हैं. दरअसल, युवाओं के घटिया प्रदर्शन की वजह से ही द्रविड़ को श्रीलंका और चैंपियंस ट्रॉफी के लिए चुना गया. लेकिन एक बार फिर चयनकर्ताओं की नज़र से द्रविड़ ओझल हो गए.

भारतीय टीम के त्रिमूर्ति, सौरव गांगुली, राहुल द्रविड़ और सचिन तेंदुलकर. यदि वी वी एस लक्ष्मण को इसमें शामिल करें तो यह चौकड़ी बनती है, जिसे क्रिकेट के जानकार फैव फोर के नाम से बुलाते थे. इनमें एक का पत्ता भारतीय टीम से पूरी तरह कट चुका है. यानी सौरव गांगुली संन्यास ले चुके हैं या कहें कि संन्यास लेने को मजबूर हुए. इस मसले पर न जाने कितनी मर्तबा बहस भी हो चुकी है. दूसरे ठहरे लक्ष्मण जो एकदिवसीय मैचों से अपना नाता तोड़ चुके हैं और आजकल कम खेले जाने वाले टेस्ट टीम के सदस्य बने हुए हैं. ख़बर यह भी है कि आने वाले कुछ टेस्ट मैचों की शृंखला के बाद वह भी क्रिकेट को अलविदा कह देंगे.

तीसरे नंबर पर हैं, भारत के दीवार यानी द वॉल राहुल द्रविड़. जिस तरह चयनकर्ता आजकल उनके साथ बर्ताव कर रहे हैं, उससे तो लगता है गांगुली के बाद द्रविड़ का भी वही हश्र होने वाला है. जिस तरह चयनकर्ताओं ने भारत के सबसे सफल कप्तान को पहले एकदिवसीय टीम से बाहर का रास्ता दिखाया, उसके बाद टेस्ट टीम में भी उनके लिए कोई जगह नहीं बची. लेकिन यह दादा (सौरव गांगुली) की जीवटता ही थी, जिसकी बदौलत वह एक बार फिर से टीम में शामिल ही नहीं हुए, बल्कि अपनी क़ाबिलियत का लोहा भी मनवाया. जब उन्होंने क्रिकेट को अलविदा बोला तो उस साल वह टेस्ट में सबसे अधिक रन बनाने वाले भारतीय खिलाड़ी थे. इसके बावजूद चयनकर्ताओं का रवैया गांगुली के लिए कैसा था, यह जगज़ाहिर है. अब चयनकर्ताओं के निशाने पर राहुल द्रविड़ हैं. दरअसल, युवाओं के घटिया प्रदर्शन की वजह से ही ज़बरदस्त फॉर्म में चल रहे द्रविड़ को श्रीलंका और चैंपियंस ट्रॉफी के लिए चुना गया. लेकिन एक बार फिर जब भारत ने ऑस्ट्रेलिया के साथ अपना क्रिकेट सीज़न की शुरुआत की तो अंतिम पंद्रह की सूची से द्रविड़ का नाम नदारद था. इससे एक बात तो साफ़ है कि चयनकर्ता कुछ ज़्यादा ही भ्रमित हैं. उन्हें समझ में नहीं आ रहा कि किसे टीम में रखा जाए और किसे बाहर किया जाए. वह कभी युवाओं की तरफ़ टकटकी लगाकर भविष्य की टीम बनाने चाहते हैं तो कभी लौट के बुद्धू घर को आए की तर्ज पर अपने अनुभवी खिलाड़ियों की शरण में आते है. सीधे तौर पर देखें तो भारतीय क्रिकेट टीम के कर्ताधर्ताओं की यही कहानी रही है. इसे पहले भी कपिल देव, उसके बाद हाल में सौरव गांगुली और अब राहुल द्रविड़ के साथ जो कुछ भी हो रहा है, उससे संकेत तो यही मिल रहे हैं कि आने वाले समय में भी यह खेल चलने वाला है.

फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

एशियाई टेबल टेनिस चैंपियनशिप

19 वीं एशियाई टेबल टेनिस चैंपियनशिप का आयोजन 16 से 22 नवंबर के बीच लखनऊ में होगा. टेबल टेनिस फेडरेशन ऑफ इंडिया के तत्वाधान में उत्तरप्रदेश टेबल टेनिस एसोसिएशन ऑफ इंडिया इसका आयोजन लखनऊ के गोमती नगर में कर रही है. 1980 में कोलकाता और 1992 में नई दिल्ली के बाद यह तीसरा अवसर है, जब इतने बड़े स्तर पर टेबल टेनिस प्रतियोगिता का आयोजन भारत में हो रहा है.

चैंपियनशिप की आयोजन समिति के अध्यक्ष प्रभात सी चतुर्वेदी के मुताबिक़, इस प्रतियोगिता में भारत सहित कुल 23 देशों के 350 खिलाड़ी भाग ले रहे हैं. विश्व के शीर्ष के सभी खिलाड़ियों ने इस प्रतियोगिता में भाग लेने की पुष्टि कर दी है.

प्रतियोगिता में टीमों के बीच मैचों की बात करें तो सभी टीमों को चैंपियन डिविजन और फर्स्ट डिविजन में रखा गया है. चैंपियन डिविजन के मुक़ाबले दूसरे चरण में सीधे नॉकआउट सिस्टम के अनुसार खेले जाएंगे. इसमें कुल आठ टीमों के बीच मुक़ाबला होगा और छह शीर्ष टीमों के अलावा बाक़ी सभी टीमों को प्रवेश के आधार पर चार वर्गों में रखा जाएगा. प्रतियोगिता में पुरूष और महिला दोनों वर्गों के मुक़ाबले होंगे, जिसके अंतर्गत, पुरूष एकल, पुरूष युगल, महिला एकल, महिला युगल और मिश्रित युगल के मुक़ाबले होंगे.

पिछली बार 2007 में यह प्रतियोगिता चीन में आयोजित की गई थी. जिसमें महिला और पुरूष एकल के दोनों वर्गों में चीनी खिलाड़ियों ने ही ख़िताब अपने नाम किया था, जबकि भारत को 10 वें स्थान से ही संतोष करना पड़ा था.

नेल्सन स्कोर की अब यादें शेष

ज़रा याद कीजिए उस अंपायर को जो किसी टीम का स्कोर नेल्सन (जैसे 111, 222 आदि) होते ही एक पैर पर खड़े हो जाते हैं. क्या आपको पता है कि वह अंपायर कौन हैं? अगर आप क्रिकेट में दिलचस्पी रखते हैं तो यह अंदाज़ा लगाना आपके लिए कतई मुश्किल नहीं है. जी हां, आपने बिल्कुल सही समझा. हम बात कर रहे हैं ब्रिटिश अंपायर डेविड शेफर्ड की. नेल्सन स्कोर पर उछलने वाले इस अंपायर की अब यादें शेष रह गई हैं. पिछले दिनों 27 अक्टूबर को मशहूर अंपायर डेविड शेफर्ड का निधन हो गया. अपने ख़ास अंदाज़ के लिए मशहूर शेफर्ड ने कुल 92 टेस्ट और 172 एकदिवसीय मैचों में अंपायरिंग की थी. शेफर्ड, लगातार तीन विश्वकप फाइनल मैचों में अंपायरिंग करने वाले पहले अंपायर थे. अपने ख़ुशमिजाज़ स्वभाव के लिए के लिए मशहूर शेफर्ड नियमों के प्रति हमेशा सख्त रहे. अपने सबसे पसंदीदा बल्लेबाज़ सचिन के लिए तो एकबार तो वह अपने ही देश के खिलाड़ी माइक अथर्टन से भिड़ गए थे, क्योंकि अथर्टन सचिन के ख़िलाफ़ कुछ अपशब्द बोल रहे थे. एकबार मैदान पर ही उनकी आंखों में आंसू आ गए, यह उस मैच की बात है जब वेस्टइंडीज़ के मशहूर गेंदबाज़ कर्टली एम्ब्रोस ने क्रिकेट को अलविदा कहा था. ज़िंदगी को हमेशा ज़िंदादिली से जीने वाले शेफर्ड ने अपना यह अंदाज़ अंपायरिंग से संन्यास लेने के बाद भी नहीं छोड़ा. इसकी मिसाल है, पिछले साल 67 की उम्र में शेफर्ड ने अपनी सबसे पुरानी दोस्त जेनी से शादी की. क्रिकेट के मैदान में अंपायरों की वृहद भूमिका के हिमायती शेफर्ड निजी जीवन में भी बेहतरीन शख्स थे. अब शेफर्ड की सिर्फ़ यादें शेष हैं, उनके जाने के बाद लगता है मानो अंपायरिंग के एक युग का अंत हो गया.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

किसमें कितना है दम

टेनिस में शीर्ष स्थान पर बने रहने के लिए रस्साकस्सी जारी है. पिछले कुछ समय में महिला टेनिस में नंबर एक की कुर्सी पर कोई भी खिलाड़ी अधिक समय तक टिक नहीं पाई. हाल में, इस अव्वल पायदान पर रूसी खिलाड़ी दिनारा सफीना ने क़ब्ज़ा किया. सफीना ने यह कारनामा अमेरिकी सनसनी सेरेना विलियम्स को नंबर दो पर पछाड़ कर किया है. डब्ल्यूटीए द्वारा जारी रैंकिंग में सफीना 7,731 अंकों के साथ शीर्ष पर पहुंच चुकी हैं, जबकि सेरेना 7,576 अंकों के साथ दूसरे पायदान पर फिसल गई हैं. दरअसल, पिछले कुछ महीने से सेरेना और सफीना के बीच नंबर एक की जंग चल रही है. रूसी खिलाड़ी सफीना गत अप्रैल में पहली बार नंबर एक की कुर्सी पर पहुंची थी, लेकिन चाइना ओपन में सेरेना ने सफीना को हराकर शीर्ष पायदान से बेदख़ल कर दिया. इन सबके बीच सफीना को शीर्ष वरीयता दिए जाने की काफ़ी आलोचना भी हुई. दरअसल, सफीना ने अभी तक एक भी ग्रैंड स्लेम ख़िताब नहीं जीता है. इसके बावजूद उन्हें नंबर की वरीयता देने के फ़ैसले ने सभी को चौंका दिया. फ़िलहाल सफीना और सेरेना के बीच 155 अंकों का फ़ासला है और दोहा ओपन में प्रदर्शन यह साबित हो जाएगा कि शीर्ष वरीयता की हक़दार सेरेना हैं या सफीना.

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

चौथी दुनिया दिल्ली, 9 नवंबर–15 नवंबर 2009

बॉलीवुड की हीरोइनों के बारे में कुछ भी कहना मुश्किल है. कभी किसी से लड़ाई तो कभी किसी से दोस्ती. ऐसा ही कुछ बिपाशा के साथ है. वह कब किसी की दोस्त बन जाती हैं और कब किसी को अपना दुश्मन मान लेती हैं, पता ही नहीं चलता.

फैशन का जलवा...

दिल्ली में चल रहे लैक्मे फैशन वीक के दौरान रैंप पर फैशन का जलवा बिख़ेरते फ़िल्मी कलाकार और मॉडल. फोटो–*सुनील मल्होत्रा*

किसी से लड़ाई तो किसी से दोस्ती

बॉलीवुड बालाओं के बारे में कुछ भी कहना मुश्किल है. कभी किसी से लड़ाई तो कभी किसी से दोस्ती. कुछ ऐसा ही बिपाशा के साथ भी है. वह कब किसी की दोस्त बन जाती हैं और कब किसी को अपना दुश्मन मान लेती हैं, पता ही नहीं चलता. इन दिनों अमृता राव के साथ उनका कोल्ड वॉर चल रहा है और मुग्धा गोडसे के साथ दोस्ती. बिप्स ने भले ही अमृता के साथ काम न किया हो, लेकिन फिर भी आजकल दोनों के बीच लड़ाई चल रही है. वजह, एक फ़िल्म में बिप्स की जगह अमृता को ले लिया गया है. मुग्धा से दोस्ती इसलिए, क्योंकि दोनों ने हाल ही में *ऑल द बेस्ट* में साथ काम किया है. पता चला है कि आजकल दोनों काफी समय साथ-साथ बिताती हैं और घूमने भी जाती हैं. मुग्धा कहती है कि उन्हें बिपाशा से काफी कुछ सीखने को मिल रहा है. अब देखना यह है कि बिपाशा की नई दोस्ती कितने दिनों तक बरक़रार रहती है.

दिव्या हॉलीवुड में

बॉलीवुड और हॉलीवुड की अभिनेत्रियों का इधर से उधर आना-जाना लगा ही रहता है. कभी हॉलीवुड की हीरोइनें हिंदी फिल्मों में अपने क़दम बढ़ाती हैं तो कभी बॉलीवुड की हीरोइनों का रुख़ हॉलीवुड की ओर हो जाता है. अब दिव्या दत्ता को ही लीजिए, वह हॉलीवुड की तरफ़ रुख़ कर रही हैं. वैसे दिव्या दत्ता का नाम बेहतरीन अदाकारा के तौर पर लिया जाता है. अब उनकी तारीफ़ हॉलीवुड में भी होने लगी है. उनमें ऐक्टिंग के गुण हैं, तभी तो उन्हें विदेशी फ़िल्मों में काम करने का मौक़ा मिल रहा है. दिव्या का कहना है कि उन्होंने पंजाबी फ़िल्में ख़ूब की हैं. वह ख़ुद को काफी ख़ुशक़िस्मत समझ रही हैं कि विदेश में भी दर्शक उन्हें पहचानते हैं.

दरअसल दिव्या हॉलीवुड के जाने माने निर्देशक फ्रेड के साथ काम कर रही हैं, जो हार्टलैंड और हिस्स जैसी फ़िल्में बना रहे हैं. दिव्या को इन दोनों ही फ़िल्मों में काम करने का मौक़ा मिला है. बहरहाल, दिव्या ने काफी लंबे समय से फ़िल्में भी साइन नहीं की थीं और की तो वह भी सीधे हॉलीवुड में. अब देखना यह है कि वह हॉलीवुड में कितनी कामयाब हो पाती हैं.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

MURUGAPPA GROUP

BSA MOTORS e-Scooters

BSA मोटार्स आ गया
सबके दिलों पे छा गया।

BSA MOTORS की हर एक इलैक्ट्रीक स्कूटर की खरीद पर पाईये
"एक साल की बैट्री वारंटी" एवम् "Rs. 4000/- का कैश कार्ड मुफ्त"।

Conditions apply##
*Ex. showroom Price starting from Rs.15,450/- for Smile in Delhi after subsidy & cash card.
*$ Battery Warranty of 12 months / 12000 km's whichever is earlier & applicable.
*# Savings Vary from model to model.

SHAHDARA: Binsar Auto Mobiles, 954 - E, Main 100 Ft Road, Babarpur Extn.Shahdara. Phone: 011-22831100 / 22831400/9911994444/9911450121. **NAJAFGARH: CNS Retail Pvt Ltd,** Plot No. 1, Block – G, Gopal Nagar. Phone: 011 - 28015634 / 28010709/ 09958019000/9212365634. **DWARKA-MAIN PALAM DABRI ROAD: CNS Retail Pvt Ltd,** D - 70/5, Main Palam Dabri Road, Mahavir Enclave. Phone: 011 – 28011702/ 45017150/09818239724/ 9212275634/ 9212170006. **NANGLOI: CNS Retail Pvt Ltd,** Plot No 18, Ram Nagar Colony, Main Najafgarh Road, Nangloi. Phone: 9971734599 / 9213899686. **KRISHNA NAGAR: Agrawal Motors,** A-1/14. Krishna Nagar, Chachi Building Chawk,Near Lal Quarter Market. Phone: 011 – 22452829/09312835117. **KAROL BAGH: Imperial Cycles,** 53/2, Deshbandhu Gupta Road, Karol Bagh. Phone: 011-65461542/ 28722276/25717886/9811453355. **ASHOK NAGAR: New Golden Cycle Store,** 36/13, Ground Floor, Ashok Nagar. Phone: 9810807183. **NOIDA: Agrawal Motors,** B-41 & 42, Sector 16 , Near Mirula's Hotel, Gautam Budh Nagar. Phone: 0120-4249906/ 4232242/9312835117/ 09350906906. **ROHINI: Rocky Autolinks,** F 18/61, Rohini, Sector 8. Phone: 9811032353 (Opening Shortly)

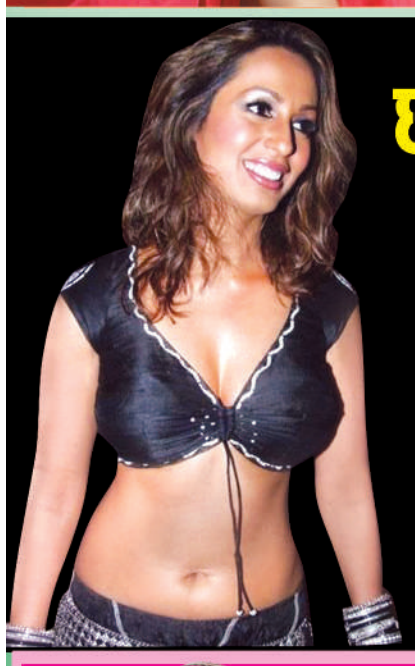

छोटे पर्दे पर कश्मीरा की वापसी

फ़िल्म यस बॉस से अपने करियर की शुरुआत करने वाली कश्मीरा शाह बॉलीवुड में ख़ुद को ठीक से स्थापित नहीं कर पाईं. वह यहां एक सफल कलाकार बनने की सोच कर आई थीं, लेकिन उनकी छवि सिर्फ़ आइटम नंबर की बनकर रह गई. अपने ऊपर से आइटम नंबर की इमेज से छुटकारा पाने के लिए उन्होंने अब अपना रुख़ टेलीविज़न की दुनिया की ओर कर लिया है. वह अब रियलिटी शो में जल्द ही नज़र आएंगी. पहले भी वह बिग बॉस में नज़र आई थी, वहां भी वह विवादों से घिरी रही थी. उससे भी उनकी इमेज को ठेस पहुंची थी. वैसे वह पहले और भी टीवी पर कई कार्यक्रम कर चुकी हैं. उन्होंने अब दोबारा अपने पुराने काम की तरफ़ लौटने का मन बना लिया है. अपनी इमेज बनाने में वह असफल रहीं तो कोई नहीं देखते क्या वह छोटे पर्दे पर काम करके अपनी इमेज को सही साबित कर पाएंगी यह तो आने वाला सीरियल ही बताएगा.

आने वाली फ़िल्म

फ़िल्म कुर्बान का निर्माण करण जौहर प्रोडक्शन के बैनर तले हुआ है. इसके निर्देशक रेनसिल डीसिल्वा हैं. संगीत सलीम सुलेमान और शंकर अहसान लॉय का है. इसमें बतौर कलाकार आपको नज़र आएंगे सैफ, करीना कपूर, विवेक ओबराय, दिया मिर्ज़ा, और ओमपुरी. सैफ इस फ़िल्म में मुसलमान बने हैं. फ़िल्म एक रोमांटिक थ्रिलर है. सैफ ने एक मास्टर माइंड आतंकवादी की भूमिका अदा की है, जो पहले करीना से झूठ बोलता है कि वह प्रोफेसर है. ओमपुरी भी एक आतंकवादी की भूमिका में हैं. फ़िल्म देखने के बाद पता चलेगा कि सैफ के झूठ बोलने का करीना पर क्या असर पड़ता है.

चौथी दुनिया

www.chauthiduniya.com

बिहार झारखंड

दिल्ली, 9 नवंबर–15 नवंबर 2009

झारखंड चुनाव

त्रिशंकु विधानसभा का भय

जिस सुनहरे कल की तलाश में इस नए सूबे का गठन हुआ था, उसका सूरज तो पिछले नौ वर्षों में नहीं उगा. इंतजार में जनता की आंखें पथरा गईं. अब एक बार फिर उसके हाथ में बैलेट का चाबुक है, लेकिन वह दुविधा में है कि कौन कर सकेगा उसकी सच्ची रहनुमाई और कौन है सज़ा का हकदार?

सरोज सिंह

झारखंड लोकतंत्र का महापर्व मनाने की तैयारी में जुट गया है. पार्टी कार्यालयों की रौनक देखते ही बन रही है. यहां ढोल–नगाड़ों का बजना आम हो गया है. हर छोटा–बड़ा नेता अपनी गोटी को पहले फिट और बाद में हिट करने की कोशिश में लगा है. यह गोटी टिकट हासिल करने से लेकर चुनावी मैदान में विजय पताका फहराने तक के लिए सेट की जा रही है. पिछले नौ साल से ठगी जा रही झारखंड की जनता के लिए हर दल के अपने कुछ वादे हैं तो कुछ नारे हैं, लेकिन इस चुनाव में एक ख़ास बात यह है कि सूबे में स्थायी सरकार का वादा व भ्रष्टाचार मिटाने का नारा सभी दलों का है. इसकी वजह भी साफ़ है. आदिवासियों के कल्याण व विकास को लेकर बिहार से अलग हुआ यह राज्य आज भ्रष्टाचार और लूट का पर्याय बन गया है. ऐसे में आम मतदाताओं के सामने यह चुनाव एक ऐसा मौका है, जिसमें वे एक ऐसी सरकार चुनें, जो सही मायनों में उनके सपनों का झारखंड बना सके. लेकिन, राज्य में रोज़ बन रहे नए गठबंधन और नेताओं की बदलती नीयत को देखते हुए ऐसा लगता है कि चुनावी कोख़ से कहीं त्रिशंकु विधानसभा न बन जाए. यही डर सता रहा है सत्ता का सुख भोग चुके व सत्ता से बाहर रहे नेताओं को. इससे भी कहीं ज़्यादा इसका डर सता रहा है झारखंड के लाचार मतदाताओं को, क्योंकि त्रिशंकु विधानसभा की स्थिति में बनने वाली सरकार उन्हें कहीं का नहीं छोड़ेगी.

हालांकि यह समय जनता के लिए निर्णायक भूमिका निभाने का ज़रूर है, लेकिन लाचारी यह है कि राजनीतिक दलों ने अच्छे विधायक व मज़बूत सरकार चुनने का विकल्प सीमित कर दिया है. कांग्रेस व भाजपा के अलावा झामुमो, झाविमो, राजद, लोजपा, जदयू व अन्य कई पार्टियों की क्षेत्रवार मज़बूत दावेदारी के बीच जनता फ़िलहाल चुप है. तालमेल व गठबंधन इस तरह हुए हैं कि मतदाताओं के सामने एक मज़बूत सरकार की तस्वीर उभर कर नहीं आ रही है. उन्हें लग रहा है कि 81 सदस्यों वाली विधानसभा में क्षेत्रवार कहीं कोई मज़बूत है तो कहीं कोई और. अगर बात कांग्रेस से शुरू की जाए तो राष्ट्रपति शासन होने के कारण राज्य में अभी कांग्रेस की सीधी हुकूमत है और पार्टी इसका फ़ायदा उठाने की भी कोशिश करेगी. राहुल गांधी के दौरे से कांग्रेसियों को जो टॉनिक मिला, उसका असर चुनावों में साफ़ देखा जा सकता है. आदिवासी व मुस्लिम बहुल इलाक़ों में पार्टी का प्रदर्शन बेहतर रहने की उम्मीद है. महाराष्ट्र, हरियाणा व अरुणाचल में मिली कामयाबी से प्रदेश के कांग्रेसी इतने उत्साहित हैं कि उन्हें लगता है कि जीत का यह सिलसिला झारखंड में भी जारी रहेगा. इंदिरा गांधी व राजीव गांधी के क़रीबी रहे बुज़ुर्ग कांग्रेसी नेता पीएन सिंह ने तो यहां तक कहा कि राज्य में जिस राहुल लहर को मैं महसूस कर रहा हूं, उसे पता नहीं आप क्यों नहीं देख पा रहे हैं. पार्टी कार्यालय में समर्थकों से घिरे सुबोधकांत सहाय तो मुक़ाबले की बात मानने को तैयार ही नहीं हैं. उनका मानना है कि जनता फ़ैसला कर चुकी है और झारखंड में कांग्रेस की सरकार बननी तय है. जनता सब को आजमा चुकी है और झूठे वादे करने वाले बेनक़ाब हो चुके हैं. दरअसल कांग्रेस पिछली सरकारों के ख़राब कामकाज व भ्रष्टाचार को मुद्दा बनाकर स्थायी व काम करने वाली सरकार का वादा जनता से कर रही है. पार्टी को लग रहा है कि इसी वादे व नारे से उसकी चुनावी नैया पार लग जाएगी, क्योंकि झारखंड की जनता इसी दर्द से कराह रही है.

अगर भाजपा की बात की जाए तो वह लोकसभा व तीन राज्यों के विधानसभा चुनावों में भले ही फिसल गई हो, लेकिन झारखंड में उसका उत्साह देखते ही बनता है. दरअसल राष्ट्रपति शासन के दौरान नक्सली गतिविधियों में हुए इजाफ़े का ठीकरा भाजपा कांग्रेस के सिर ही फोड़ रही है. पार्टी के लिए एक और अच्छी बात यह हो रही है कि गुटबाजी का रोग इसे कम सता रहा है. इंदर सिंह नामधारी के साथ आ जाने से भी बिहार से सटे इलाक़ों में पार्टी को फ़ायदा मिल रहा है. इसके अलावा पार्टी के परंपरागत वोटरों में बिखराव कम दिख रहा है. छत्तीसगढ़ के विकास का उदाहरण भी जनता को दिया जा रहा है. पार्टी चुनाव अभियान समिति के संयोजक अर्जुन मुंडा तो बातचीत में यह दावा करना नहीं भूलते कि राज्य में बनने वाली भाजपा की सरकार सुशासन का ऐसा उदाहरण पेश करेगी, जिसे दुनिया देखेगी. उनका यह भी दावा है कि पार्टी स्थायी व काम करने वाली सरकार देगी. यशवंत सिन्हा का मानना है कि झारखंड की जनता समझदार है और कुशासन से निजात पाने के लिए इस बार वह भाजपा को ही मौक़ा देगी. भाजपा का केंद्रीय नेतृत्व भी झारखंड चुनाव को लेकर बेहद गंभीर है, क्योंकि देश भर में कार्यकर्ताओं के गिरे हुए मनोबल को बढ़ाने की संजीवनी उसे यहां शानदार जीत से ही मिल सकती है.

पिछले छह महीनों में बाबूलाल मरांडी ने संथाल परगना व उससे सटे इलाक़ों में जो मेहनत की है, उसका असर दिखने लगा है. बाबूलाल मरांडी अगर अपने समर्थकों को मतदान केंद्र तक लाने में सफल रहे तो महारथियों का गणित इस चुनाव में गड़बड़ा सकता है. बोकारो के सम्मेलन में नीतीश कुमार के तेवर ने साफ़ कर दिया कि झारखंड चुनाव को वह कितनी गंभीरता से ले रहे हैं. राजा पीटर के रूप में जदयू को एक मज़बूत आदिवासी नेता मिल गया है. लालू व रामविलास पासवान भी विधायकों की संख्या बढ़ाने के लिए ख़ूब पसीना बहा रहे हैं. झामुमो ने भी अपनी ताक़त बढ़ाने के लिए रात–दिन एक कर रखा है, क्योंकि यह चुनाव उसके लिए जीवन–मरण का प्रश्न बन गया है. वामदल भी अंकतालिका में कहीं दिखने को लालायित हैं. सभी दलों की मज़बूत स्थिति के बीच निर्दलीय उम्मीदवारों के तेवर से भी झारखंड की अगली विधानसभा की तस्वीर धुंधली दिखाई पड़ रही है. मतदाता चुप ज़रूर हैं, पर दुविधा में हैं. कहीं पार्टी अच्छी है तो उम्मीदवार कमज़ोर है और कहीं उम्मीदवार बेहतर है तो पार्टी कमज़ोर. चाहकर भी कुछ न कर पाने जैसे हालात. मतदान तिथि तक इस स्थिति से निकलने की बेचैनी मतदाताओं के चेहरे पर साफ़ देखी जा सकती है. सियासी जाल ने जो दुविधा पैदा की है, मतदाता उससे हर हाल में बाहर निकलना चाह रहे हैं, क्योंकि सोते–जागते उन्हें त्रिशंकु विधानसभा का डर सता रहा है.

विधायक बनाएंगे तो बनेंगे सीएम: शिबू

सूबे की राजनीति के धुरी रहे शिबू सोरेन इस बार आर–पार के मूड में हैं. पचास से अधिक सीटें जीतने का दावा करने वाले सोरेन मधु कोड़ा सरकार को समर्थन देना अपनी बड़ी गलती बताते हैं. उनका मानना है कि अपनी माटी की पार्टी ही अब इस राज्य को बचा सकती है. बाहर के नेता यहां सब कुछ क़ब्ज़ा कर लेना चाहते हैं, लेकिन इस बार राज्य की जनता ऐसा हरगिज़ नहीं होने देगी.

मैंने तो अपनी पूरी जवानी अलग राज्य की लड़ाई में गुज़ार दी, अब बुढ़ापा आ गया है. इसलिए चाहता हूं कि झारखंड की कमान सुरक्षित हाथों में रहे. मैं ग़रीबी में जिया, ग़रीबों के लिए लड़ाई की, महाजनी की लड़ाई में पिता को खो दिया, लेकिन खनिज संपदा से लबालब इस राज्य को स्वार्थी नेताओं ने बंजर बना दिया. राज्य की बागडोर संभालने के सवाल पर उन्होंने कहा कि यह लोकतांत्रिक प्रकिया है. विधायक बनाएंगे तो हम सीएम बनेंगे. चुनाव आयोग के काम करने के ढंग से भी वह नाराज दिखे. सोरेन ने कहा कि आयोग ने पता नहीं कैसे पांच चरणों में चुनाव कराने का फ़ैसला कर लिया और लोगों की सुविधा–असुविधा का ख्याल नहीं रखा. त्रिशंकु विधानसभा की आशंका को ख़ारिज़ करते हुए शिबू सोरेन दावा करते हैं कि राज्य में पूर्ण बहुमत के साथ उनकी सरकार बनेगी.

परिंदा भी पर नहीं मार सकेगा

नक्सलियों की चुनौती को देखते हुए राज्य में सुरक्षा के अभूतपूर्व इंतजाम किए गए हैं. केंद्र सरकार कोई जोख़िम लेने के मूड में नहीं है. इसलिए सूबे में चुनाव के दौरान 40 हज़ार अर्धसैनिक बलों की तैनाती की तैयारी है. इसके अलावा ज़िला बल के 42 हज़ार, जैप के 11 हज़ार और होमगार्ड के 20 हज़ार जवान नक्सलियों के मंसूबों को ध्वस्त करने के लिए लगाए जाएंगे.

अधिकारियों ने जवानों की तैनाती का खाका भी तैयार कर लिया है. नक्सल प्रभावित इलाक़ों के अति संवेदनशील मतदान केंद्रों पर 25, संवेदनशील केंद्रों पर 15 और सामान्य मतदान केंद्रों पर पांच से दस जवानों की तैनाती की जाएगी. दरअसल राजधानी एक्सप्रेस को बंधक बनाने की घटना के बाद से ही सरकार को लग रहा है कि चुनाव के दौरान नक्सली झारखंड में इस तरह की घटना को अंजाम देकर मतदाताओं में दहशत का माहौल क़ायम कर सकते हैं. झारखंड की भौगोलिक स्थिति ऐसी है कि इन आशंकाओं को ख़ारिज़ भी नहीं किया जा सकता है. इसलिए सरकार अपने स्तर पर कोई कसर नहीं छोड़ना चाहती है. चप्पे–चप्पे पर जवानों को तैनात करने की कोशिश है, ताकि चुनाव निष्पक्ष और शांतिपूर्ण ढंग से संपन्न हो सके.

feedback@chauthiduniya.com

तस्करों का मनोबल इतना बढ़ गया कि उन्होंने पूर्णिया शहर के अन्य पौराणिक मंदिरों से भी कई मूर्तियां चुरा लीं. आज यहां के कई ऐतिहासिक मंदिर खंडहर में तब्दील हो चुके हैं.

सत्ता से बाहर रहने के कारण कांग्रेस पार्टी संगठन व समर्थन दोनों ही मोर्चों पर कमज़ोर हो गई थी. इसके अलावा अंदरूनी कलह भी कमज़ोरी की एक वजह है. लोकसभा चुनाव के पहले कांग्रेस ने टैलेंट सर्च अभियान चलाया.

मूर्तियों की तस्करी से सीमांचल के मंदिर हुए वीरान

सीमांचल में अब भगवान भी सुरक्षित नहीं रहे. मूर्ति तस्कर विभिन्न मंदिरों से बेशक़ीमती मूर्तियां चुराकर उन्हें देश के दूसरे हिस्सों व विदेशों में बेच देते हैं. मूर्तियां चोरी होने से पूर्णिया, किशनगंज, अररिया, कटिहार और मधेपुरा ज़िले के कई प्राचीन एवं पौराणिक मंदिर वीरान हो गए हैं. किशनगंज स्थित बड़जान का सूर्य मंदिर, पूर्णिया शहर स्थित प्राचीन त्रिपूर सुंदरी मंदिर और मधेपुरा स्थित भेलवा का राम जानकी मंदिर इसके उदाहरण हैं. अरबों रुपये की मूर्तियों की तस्करी हो जाने के बाद भी पुलिस-प्रशासन हाथ पर हाथ धरे बैठा है. पूर्णिया रेंज के आरक्षी उप महानिरीक्षक सुनील कुमार झा ने यह कहकर अपना पल्ला झाड़ लिया कि मूर्ति चोरी के संबंध में अब तक कोई सुराग पुलिस के हाथ नहीं लगा है.

वर्ष 1995 में पूर्णिया शहर स्थित मां त्रिपूर सुंदरी देवी के मंदिर से मूर्ति चोरी हो गई. अष्ट धातु से बनी मां त्रिपूर सुंदरी की इस मूर्ति का वजन 50 मन (20 कुंतल)था. पुलिस ने इस मूर्ति की क़ीमत अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में क़रीब दस करोड़ रुपये आंकी थी. इस मंदिर में मन्नत मांगने और पूजा-अर्चना करने के लिए नेपाल, बंगाल, सिक्किम एवं उड़ीसा से हज़ारों श्रद्धालु आते थे, लेकिन आज यह खंडहर में तब्दील हो गया है. जानकारों के अनुसार, यह मुगलकालीन मूर्ति त्रिपुरा, काठमांडू के अलावा पूर्णिया शहर में ही थी. इतना ही नहीं, तस्करों का मनोबल इतना बढ़ गया कि उन्होंने पूर्णिया शहर के अन्य

पौराणिक मंदिरों से भी कई मूर्तियां चुरा लीं. आज यहां के कई ऐतिहासिक मंदिर खंडहर में तब्दील हो चुके हैं. तस्करों ने नवंबर 2000 में पूर्णिया के बनमनन्खी स्थित जीवछपुर हरपट्टी गांव के मंदिर से 1930 में स्थापित रामजानकी की मूर्तियां चुरा लीं, जिनकी क़ीमत 25 लाख आंकी गई.

पूर्णिया के ही कस्बा मदार घट ठाकुरवाड़ी से 2001 में तस्करों ने 200 साल पुरानी रामजानकी की मूर्तियां चुरा लीं, जिनकी क़ीमत 50 लाख रुपये आंकी गई. 2008 के दिसंबर में कस्बा मोहनी टिकापुर से तस्करों ने रामजानकी, हनुमान व गणेश समेत 5 मूर्तियां चुरा लीं, जिनके बारे में स्थानीय ग्रामीणों ने जानकारी दी कि कुछ लोग मंदिर में दर्शन करने पूर्णिया से आए थे. उन्होंने मूर्तियों को प्रणाम करने के बहाने खरोंच कर देखा. उसके दूसरे ही दिन ठाकुरवाड़ी से मूर्तियां गायब हो गईं. पुजारी के बयान पर कस्बा थाने में मामला दर्ज़ कर लिया गया, जिसमें गुलाब बाग पूर्णिया निवासी मोहम्मद सरवर और उनके साले समेत चार लोगों को नामज़द किया गया. अभी तक एक भी नामज़द की गिरफ़्तारी पुलिस नहीं कर पाई है. पुलिस के अनुसार, सरवर अभी तक फरार है. इन मूर्तियों को तस्कर कहां ले गए, आज तक इसका पता नहीं चल पाया है.

वर्ष 2008 में ही किशनगंज के बड़जान से तस्करों ने सूर्य देव की एक आदमकद प्रतिमा समेत आधा दर्ज़न पौराणिक मूर्तियां चुरा लीं, जो 1964-65 में पुरातत्व विभाग को खुदाई में मिली थीं. अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में इनकी क़ीमत 25 करोड़ रुपये आंकी गई थी. मधेपुरा ज़िले के गमहरिया भेलवा में वर्ष 2001 में तस्करों ने दो बार धावा बोलकर नाटकीय अंदाज़ में राम और जानकी की मूर्तियां चोरी लीं. पुन: 2009 में तस्करों ने शेष बची लक्ष्मण की मूर्ति भी चुरा ली. इसी प्रखंड के कोरिहार तरावे में 2009 में रामजानकी की मूर्तियों को तस्करों ने चोरी कर लिया.

वर्ष 2000 में खगड़िया ज़िले के संहौली गांव में 400 साल पुरानी मूर्तियां तस्कर हथियारों के बल पर लूट ले गए. इनकी क़ीमत 5 करोड़ रुपये आंकी गई. वर्तमान में सहरसा ज़िले के महिशी स्थित प्रखर शक्तिपीठ मानी जाने वाली मां भगवती पर भी तस्करों की टेढ़ी नज़र है, जिसे चोरी करने की कोशिश एक बार हो चुकी है. इसके अलावा मधेपुरा, सुपौल, पूर्णिया, अररिया और कटिहार के कई छोटे मंदिरों की प्राचीन मूर्तियां चोरी हो चुकी हैं.

नीरज कुमार सिंह
feedback@chauthiduniya.com

कांग्रेस में नई जान फूंकने की कोशिश

मनोज कुमार राव

महात्मा गांधी ने चंपारण की जिस धरती से अंग्रेजों के ख़िलाफ़ विरोध का बिगुल फूंका था, वहां पर इन दिनों कांग्रेस का हाथ कुछ अजूबा करने की कोशिश में है. नीतीश सरकार के प्रति आमजन का रोष और राहुल गांधी की आक्रामक कार्यशैली ने चंपारण के कांग्रेसियों में एक नई जान फूंक दी है. अब पार्टी को अपने अंदर और बाहर की कुछ बाधाओं को दूर करना है. दरअसल चंपारण में कांग्रेस को लालू और नीतीश की मज़बूत पकड़ से दो-चार होना पड़ रहा है.

सत्ता से बाहर रहने के कारण कांग्रेस पार्टी संगठन व समर्थन दोनों ही मोर्चों पर कमज़ोर हो गई थी. इसके अलावा अंदरूनी कलह भी कमज़ोरी की एक वजह है. लोकसभा चुनाव के पहले कांग्रेस ने टैलेंट सर्च अभियान चलाया. इसकी ख़ूब चर्चा हुई. कई नए चेहरे हाथ में अपना बायोडाटा लेकर पटना के सदाकत आश्रम पहुंचे. यहां चार पहिया वाहनों की रेलमपेल देखी गई. एहसास कराया गया कि कांग्रेस में भी कॉरपोरेट कल्चर का टच है. पूर्वी चंपारण सहित पूरे चंपारण के होनहारों ने साक्षात्कार का सामना किया और दिल्ली से सदाकत आश्रम पहुंचे युवक कांग्रेस के राष्ट्रीय अध्यक्ष जितेंद्र सिंह, जगदीश टाइटलर एवं अशोक तंवर सरीखे युवा व वरिष्ठ नेताओं ने वहां आए पढ़े-लिखे युवाओं का इंटरव्यू लिया. हालांकि सब्जबाग तो बहुत दिखाए गए, लेकिन कम से कम बिहार और चंपारण में इसका कोई असर नहीं दिखा. क्योंकि, न तो राहुल गांधी आए और न ही चंपारण के होनहार कांग्रेसियों को मुख्यधारा में आने का मौक़ा मिला. टैलेंट सर्च की गाड़ी पूर्वी चंपारण क्यों नहीं पहुंची, यह तो कांग्रेसी ही बेहतर बता सकते हैं. लेकिन, बदले माहौल में कांग्रेस ने राहुल गांधी के निर्देशन में अपनी वर्षों पुरानी नीति थ्री पी यानी प्रेयर, पिटीशन और पोस्टर को संभवत: नए कलेवर के साथ आज़माने की कवायद शुरू कर दी है. यह फॉर्मूला कांग्रेस ने अंग्रेजों को भारत से खदेड़ने के लिए अपनाया था, जिसका बेहतर परिणाम सामने आया था. अब चंपारण में संभवत: इसकी शुरुआत पोस्टरबाजी के रूप में चौक, चौराहों, रेलवे स्टेशन और बस स्टैंड आदि पर देखी जा सकती है.

अरविंद गुप्ता

शैलेंद्र शुक्ला

विगत लोकसभा चुनाव में कांग्रेस को लगभग साढ़े ग्यारह प्रतिशत मत प्राप्त हुए थे और हाल ही में संपन्न हुए विधानसभा उपचुनाव में यह प्रतिशत बढ़कर 15 हो गया था.

मंजू राम

चंपारण के कांग्रेसियों का मानना है कि राजद सुप्रीमो लालू प्रसाद यादव का विरोध मत, जो कभी नीतीश कुमार की झोली में गिरता था, आज कांग्रेस के नए वर्क कल्चर से प्रभावित होकर उसकी झोली में आ गया है. महाराष्ट्र व हरियाणा में कांग्रेस ने अच्छा प्रदर्शन किया तो चंपारण में भी ख़ूब पटाखे फोड़े गए. पूर्वी चंपारण के कांग्रेस ज़िला अध्यक्ष शैलेंद्र शुक्ल मानते हैं कि राहुल गांधी के दलित प्रेम ने पूरे देश को एक सकारात्मक संदेश दिया है, जिससे प्रभावित होकर पूर्वी चंपारण ज़िले के लगभग 80 फ़ीसदी पुराने कांग्रेसी, जो कभी नाराज होकर पार्टी का दामन छोड़ चुके थे, आज फिर कांग्रेस की ओर रुख़ कर चुके हैं. पार्टी के मज़बूत होते जनाधार से उत्साहित शैलेंद्र ने राहुल गांधी से मिलकर उन्हें चंपारण आने का न्योता भी दिया है. बकौल शुक्ल, हाल ही में कांग्रेस ने अपनी 19 योजनाओं की घोषणा की है, जिनमें रोज़गार गारंटी योजना, प्रकल्प के माध्यम से शौचालयों का निर्माण, मिड डे मील और उम्रदराज़ लोगों को पेंशन आदि शामिल हैं. इससे आम जनता की परेशानी ज़रूर दूर होगी.

महंगाई भले ही चाहे जितनी हो, लेकिन कांग्रेस राज में 70 हज़ार करोड़ रुपये की क़र्ज़ माफी से किसानों को जो राहत मिली है, उसे चंपारण के कांग्रेसी भुनाना चाहते हैं, ताकि आने वाले विधानसभा चुनाव में उनके पक्ष में मतदान हो सके. पश्चिमी चंपारण ज़िले की कांग्रेस अध्यक्ष मंजू राम एवं अन्य वरीय कांग्रेसी नेताओं का मानना है कि आने वाला वक़्त हर हाल में कांग्रेस का ही होगा. मंजू राम बताती हैं कि महिला कार्यकर्ताओं की विशेष टीम का गठन किया जा रहा है, जिसमें पढ़ी-लिखी महिलाओं को तरजीह दी जाएगी, ताकि आम मतदाताओं की समस्याओं को आसानी से कांग्रेस के बैनर तले प्रशासनिक अधिकारियों तक पहुंचाया और उनके समाधान की पहल की जा सके. लोस चुनाव में पूर्वी चंपारण से कांग्रेस के उम्मीदवार रहे अरविंद गुप्ता ने बताया कि हर ओर कांग्रेस की जय-जयकार हो रही है. केंद्र व राज्य सहित सभी तरफ़ के मतदाता तेज़ी से कांग्रेस की ओर रुख़ कर रहे हैं, जिसके अच्छे परिणाम आने वाले चुनाव में देखने को मिलेंगे.

feedback@chauthiduniya.com

गंगापुर में आईटीआई की स्थापना पर लगा ग्रहण

कहते हैं कि चुनावी मौसम में किए गए वादों पर भरोसा करने वाले अक्सर पछताते हैं. लोकसभा चुनाव से पहले समस्तीपुर के गंगापुर गांव में आईटीआई खोलने को लेकर हुई कवायद पर शायद ग्रहण लग गया है. रामविलास पासवान और रामचंद्र पासवान के चुनाव हार जाने के बाद यहां के किसान ख़ुद को ठगा सा महसूस कर रहे हैं, क्योंकि उनकी क़ीमती ज़मीन दांव पर लगी है. काम में प्रगति न होते देख अब स्थानीय किसान आर-पार की लड़ाई के मूड में हैं.

पंद्रहवीं लोकसभा चुनाव की अधिसूचना जारी होने के दो-तीन दिन पहले 28 फरवरी 2009 को ज़िले के गंगापुर गांव में रोसड़ा के पूर्व लोजपा सांसद रामचंद्र पासवान के प्रयास से रामविलास पासवान ने आनन-फानन में स्टील ऑथारिटी ऑफ इंडिया (सेल) के सहयोग से आईटीआई की स्थापना हेतु शिलान्यास कार्य समारोह पूर्वक संपन्न किया. सेल द्वारा आईटीआई केंद्र की स्थापना हेतु किसानों से भूमि ख़रीद के लिए तत्काल क़रीब एक करोड़ रुपए आवंटित करने की घोषणा की गई. किसानों की उपजाऊ भूमि का बलिदान तकनीकी प्रशिक्षण केंद्र के नाम पर कर तो लिया गया, लेकिन पासवान बंधुओं के चुनाव हार जाने के बाद गंगापुर में आईटीआई खुलने की योजना पर विराम लग गया है. ज़िले की दो विधानसभा सीटों कल्याणपुर और वारिसनगर में पिछले महीने संपन्न उपचुनाव के मौक़े पर गंगापुर आईटीआई की चर्चा जोरों से हुई थी. उस वक़्त उप मुख्यमंत्री एवं वित्त मंत्री सुशील कुमार मोदी ने इस संबंध में कहा कि आईटीआई की स्थापना लोजपा नेताओं का चुनावी स्टंट था और इसकी कोई भी सूचना राज्य सरकार को प्राप्त नहीं है. दूसरी ओर पूर्व इस्पात, रसायन एवं उर्वरक मंत्री रामविलास पासवान और पूर्व सांसद रामचंद्र पासवान प्राय: हर चुनावी सभा में कहा करते थे कि बिहार सरकार ने आईटीआई खोलने हेतु एनओसी (अनापत्ति प्रमाणपत्र) जारी नहीं किया.

सत्तापक्ष एवं विपक्ष के नेताओं द्वारा आईटीआई की स्थापना को लेकर परस्पर विरोधी बयानबाजी के चलते गंगापुर के किसान, जिन्होंने अपनी उपजाऊ भूमि प्रशिक्षण केंद्र की स्थापना के लिए दी है, इन दिनों सक्रिय हो उठे हैं और पूर्व केंद्रीय मंत्री एवं उनके भाई की पार्टी लोजपा के स्थानीय दिग्गजों को खोज रहे हैं. किसानों को सांत्वना देने के लिए लोजपा ने पिछली 8-9 सितंबर को ज़िला समाहरणालय पर धरना देकर राज्य सरकार से आईटीआई की स्थापना हेतु एनओसी जारी करने की मांग की. लेकिन, गंगापुर के किसानों को आशंका है कि जिस प्रकार 70 के दशक में मोहनपुर गांव में ग्रेफाइट फैक्ट्री की स्थापना हेतु किसानों की उपजाऊ भूमि लेकर व्यवसायियों को आवंटित कर दी गई थी और ग्रेफाइट फैक्ट्री समस्तीपुर के बदले दूसरे राज्य में चली गई थी, उसी प्रकार कहीं इस बार भी वही पुरानी कहानी न दोहरा दी जाए. भाजपा के वरिष्ठ नेता शशिकांत आनंद का कहना है कि यदि सचमुच में सेल ज़िले में आईटीआई की स्थापना करना चाहता है तो उसे सरकार के पास प्रस्ताव भेजना चाहिए. आईटीआई की स्थापना हेतु यदि भूमि ख़रीद हुई है तो सेल को इसकी स्थापना हेतु पहल करनी चाहिए. उन्होंने लोजपा प्रमुख रामविलास पासवान एवं पूर्व सांसद रामचंद्र पासवान को चुनौती देते हुए कहा कि उन्हें गंगापुर गांव आकर लोगों को वास्तविकता की जानकारी देनी चाहिए, क्योंकि आईटीआई की स्थापना उनका चुनावी स्टंट था.

पूर्व सांसद रामचंद्र पासवान ने चौथी दुनिया को बताया कि बहुप्रतीक्षित आईटीआई की स्थापना के लिए पूर्व केंद्रीय इस्पात, रसायन एवं उर्वरक मंत्री रामविलास पासवान द्वारा गंगापुर में सेल के सौजन्य से आधारशिला रखी गई थी. बावजूद इसके राज्य सरकार ने उक्त केंद्र की स्थापना हेतु एनओसी निर्गत नहीं किया है. उन्होंने कहा कि ज़िले के सर्वांगीण विकास की नैतिक एवं संवैधानिक जवाबदेही स्थानीय सांसदों की होती है. आईटीआई की स्थापना हेतु क्षेत्रीय सांसदों को केंद्रीय इस्पात, रसायन एवं उर्वरक मंत्रालय से अपील करनी चाहिए, क्योंकि मंत्रालय ने समस्तीपुर में आईटीआई की स्थापना हेतु स्वीकृति प्रदान की है और सेल ने इस हेतु आर्थिक सहायता भी मुहैया कराई है.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

खुली तिजोरी तो टूटे कई मिथक

दरभंगा के कामेश्वर नगर स्थित महाराजाधिराज रामेश्वर सिंह अभिलेखागार की तिजोरी से निकली महत्वपूर्ण पांडुलिपियों और अभिलेखों ने इतिहास के कई तथ्यों को मिथक साबित कर दिया है. प्राप्त अभिलेखों के आधार पर मिथिला के सामाजिक इतिहास के पुनर्लेखन की आवश्यकता महसूस की जा रही है. इससे मिथिला के सामाजिक इतिहास में व्यापक फेरबदल की संभावना प्रबल हो गई है. ख़ासकर मिथिला में पंजी-प्रथा के इतिहास की सत्यता पर प्रश्नचिन्ह लग गया है, जो इतिहासविदों के लिए शोध का विषय है. इसके अलावा दरभंगा महाराज के कांग्रेस से प्रगाढ़ रिश्ते होने की बात भी उभर कर सामने आई है.

राज परिवार और कांग्रेस के बीच की निकटता साबित होने के बाद न सिर्फ़ कांग्रेस, बल्कि भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के इतिहास में भी नया अध्याय जुड़ेगा. इतना ही नहीं, राज परिवार के प्रति आम लोगों की धारणा में परिवर्तन की संभावना भी बढ़ गई है. वहीं शिक्षा का मुख्य केंद्र मिथिलांचल का होना एवं शिक्षा के क्षेत्र में राज परिवार के योगदान की कहानी को भी एक नया आयाम मिला है.अब तक उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर भारतीय इतिहास की यह मान्यता रही है कि मिथिला में पंजी-प्रथा का इतिहास 14वीं शताब्दी से शुरू हुआ. अभिलेखों के आधार पर अब यह प्रमाण मिलता है कि ज्ञात से पंजी-प्रथा का इतिहास लगभग ढाई सौ वर्ष पुराना है. कर्नाटक राजवंश के शासक राजा हर सिंह देव (1324 ई.) के काल से मिथिला में पंजी प्रथा की शुरुआत मानी जाती रही है, लेकिन महाराजाधिराज की तिजोरी से प्राप्त 12वीं शताब्दी से लिखी गई दरभंगा महाराज की वंशावली ने इन इतिहास के मिथकों को तोड़ दिया है. अभिलेखों में राजघराने की 21 पीढ़ियों की वंशावली की मूल प्रति का प्राप्त होना वास्तव में इतिहासविदों के लिए शोध का मार्ग खुलने के समान है.

स्वाधीनता आंदोलन के संदर्भ में कांग्रेस व राज परिवार के बीच संबंध को लेकर जो तथ्य इतिहास के पन्नों में दर्ज़ हैं, उनमें भी व्यापकता की गुंज़ाइश है. 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में वायसराय लार्ड डफरिन के विरोध के बावजूद दरभंगा महाराज द्वारा इलाहाबाद में कांग्रेस के अधिवेशन के लिए भवन उपलब्ध कराया गया था. इससे पूर्व कांग्रेस और राज परिवार के बीच निकटता होने संबंधी तथ्यों की जानकारी नहीं मिलती है. प्राप्त पत्रों एवं अभिलेखों से प्रमाणित होता है कि स्थापना काल से ही कांग्रेस के साथ दरभंगा राज परिवार का रिश्ता प्रगाढ़ था. आम धारणाओं के अनुसार, महाराजा लक्ष्मीश्वर सिंह के अलावा दरभंगा राज परिवार के अन्य शासक अंग्रेजों के ही पिछलग्गू बने रहे. उन्होंने स्वाधीनता संग्राम में भागीदारी के बजाय ब्रिटिश हुकूमत के हितों की रक्षा में ही दिलचस्पी दिखाई, लेकिन तिजोरी से निकले पत्रों ने इस धारणा को ग़लत साबित कर दिया है. इन पत्रों से ज्ञात होता है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के संस्थापक एओ ह्यूम से लेकर डब्ल्यू सी बनर्जी एवं पार्टी के अन्य वरिष्ठ नेता दरभंगा राज परिवार के निकट संपर्क में रहे. राज परिवार के साथ उनका पत्राचार भी होता रहा. तिजोरी से मिले एक अन्य अभिलेख से ज्ञात होता है कि वर्ष 1880 के आसपास राज परिवार द्वारा कांग्रेस को प्रतिवर्ष दस हज़ार रुपये की आर्थिक मदद दी जाती थी.

संपूर्ण मिथिला की बात करें तो गंडक-कोसी व हिमालय के तराई के बीच का क्षेत्र 13-16वीं शताब्दी तक शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी रहा. प्राप्त अभिलेखों से भी यह स्पष्ट हो गया है कि मिथिला शिक्षा का प्रमुख केंद्र था. इंडियन सिविल सर्विस (आईसीएस) की परीक्षा में भारतीयों को उचित स्थान देने का समर्थन राज परिवार द्वारा किया गया था. राजघराने के निर्देश पर ही विद्यानंद झा ने 1899 में कांग्रेसी नेता दादा भाई नौरोजी को एक पत्र लिखकर उक्त परीक्षा में भारतीयों को उचित जगह नहीं दिए जाने के मुद्दे को उठवाया था. राज परिवार द्वारा नियमित रूप से साहित्यकारों को उनकी विशिष्ट कृति के लिए पुरस्कृत किया जाता था. पुरस्कारों की तीन श्रेणियां थीं. पुरस्कार स्वरूप 100, 150 व 200 रुपए की अलग-अलग राशि प्रदान की जाती थी. उस वक़्त दो सौ रुपए की राशि सौ एकड़ ज़मीन की क़ीमत के बराबर थी. इससे सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि साहित्य व संस्कृति से राजघराने का अत्याधिक लगाव था. साथ ही इस तथ्य को भी इससे बल मिला है कि मिथिलांचल शिक्षा का मूल केंद्र था. इस संबंध में मिथिला मिसलेनी के लेखक एवं मिथिला इतिहास संस्थान के सचिव डॉ. धर्मेंद्र कुमार ने बताया कि अभिलेखागार की तिजोरी खुलने से कई ऐतिहासिक तथ्यों से पर्दा हटेगा.

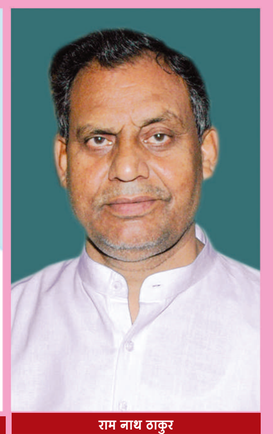

भारतेंद्र
feedback@chauthiduniya.com

तिजोरी को खोलते कारीगर

डॉ. अशोक कुमार

सुनील कुमार पुष्पम

राम नाथ ठाकुर

बिछने लगीं राजनीतिक गोटियां

चुनाव का समय जैसे-जैसे क़रीब आता जा रहा है, नेताओं के दिल की धड़कनें भी उतनी ही तेज़ी से बढ़ती जा रही हैं. किसी की नज़र अपनी परंपरागत सीट पर है तो कोई नए परिसीमन के चलते अपना क्षेत्र बदलने को विवश है. लेकिन, आतुर सब हैं विधानसभा जाने के लिए.

विकास कुमार

समाजवादियों का गढ़ कहे जाने वाले समस्तीपुर में चुनाव की तैयारियां तेज़ हो गई हैं. ज़िले के दो विधानसभा क्षेत्र कल्याणपुर और वारिस नगर के उपचुनाव जीतने के बाद राजद-लोजपा गठबंधन के कार्यकर्ताओं का मनोबल सातवें आसमान पर है. ऐसा इसलिए, क्योंकि ज़िले की दस विधानसभा सीटों में से सात पर अब राजद-लोजपा का क़ब्ज़ा है. बाक़ी बचे क्षेत्रों में सिंघिया से कांग्रेस के डॉ. अशोक कुमार, विभूतिपुर से सीपीएम के रामदेव वर्मा एवं समस्तीपुर से जद-यू के रामनाथ ठाकुर विधायक हैं. ठाकुर राज्य सरकार के विधि, सूचना एवं जनसंपर्क मंत्री हैं. राजद-लोजपा गठबंधन की निगाहें अब समस्तीपुर विधानसभा क्षेत्र पर टिकी हैं, जहां से उसके प्रत्याशी लगातार तीन चुनावों से मात खाते आ रहे हैं. राजद-लोजपा गठबंधन ज़िले के सभी विधानसभा क्षेत्रों पर अपनी विजय पताका फहराने की तैयारी में जुट गया है. वहीं राजग गठबंधन और कांग्रेस भी अपनी स्थिति मज़बूत करने के लिए अभी से पसीना बहा रहे हैं. चूंकि सीटों का परिसीमन हो चुका है, इसलिए सभी दलों के प्रत्याशी जातीय व सामाजिक समीकरणों को ध्यान में रखते हुए अपनी जीत सुनिश्चित करने के लिए गुणा-भाग करने में जुट गए हैं.

नए परिसीमन के अंतर्गत सिंघिया एवं दलसिंगसराय विधानसभा क्षेत्रों को खत्म कर उजियारपुर व मोरबा विधानसभा क्षेत्र गठित किए जाने से राजनीतिक परिदृश्य बदल गया है और वर्तमान विधायकों में से कई लोग नए क्षेत्र के जुगाड़ में लगे हुए हैं. नए परिसीमन के अंतर्गत रोसड़ा सामान्य से सुरक्षित क्षेत्र एवं वारिस नगर सुरक्षित से सामान्य क्षेत्र में बदल जाने से यहां के वर्तमान और पूर्व विधायक ने बगल के विधानसभा क्षेत्र में जनसंपर्क अभियान शुरू कर दिया है. सिंघिया विधानसभा क्षेत्र ख़त्म हो जाने के बाद राज्य विधानसभा में कांग्रेस विधायक दल के नेता डॉ. अशोक कुमार की नजरें नवगठित कुशेश्वरस्थान (सुरक्षित) एवं रोसड़ा (सुरक्षित) क्षेत्र पर जमी हुई हैं. इसी तरह चर्चा है कि रोसड़ा विधानसभा क्षेत्र के सुरक्षित सीट हो जाने से पूर्व शिक्षा मंत्री एवं राजद विधायक गजेंद्र प्रसाद सिंह बगल के वारिस नगर विधानसभा क्षेत्र में जा सकते हैं. यह सीट परिसीमन के बाद सुरक्षित से सामान्य में बदल गई है. जद-यू के पूर्व विधायक अशोक कुमार मुन्ना भी अब रोसड़ा के स्थान पर वारिस नगर विधानसभा क्षेत्र से चुनाव लड़ने के लिए कमर कस रहे हैं.

वहीं दलसिंगसराय विधानसभा क्षेत्र नए परिसीमन के अंतर्गत समाप्त हो जाने से वर्तमान राजद विधायक रामलखन महतो के समर्थक अब नवगठित उजियारपुर विधानसभा क्षेत्र में जनसंपर्क अभियान चला रहे हैं. पूर्व विधायक एवं जद-यू नेता विजय कुमार चौधरी ने इस बार निकटवर्ती सरायरंजन विधानसभा क्षेत्र से चुनाव लड़ने की तैयारी शुरू कर दी है. पिछली बार वह जद-यू के टिकट पर सरायरंजन विधानसभा क्षेत्र से चुनाव लड़े थे और क़रीब पांच हज़ार मतों के अंतर से राजद विधायक रामचंद्र निषाद से पराजित हो गए थे. नए परिसीमन के अंतर्गत सरायरंजन विधानसभा क्षेत्र से मोरबा प्रखंड को अलग कर इसे मोरबा विधानसभा क्षेत्र का रूप दिए जाने से इस क्षेत्र के राजद विधायक रामचंद्र निषाद की निगाहें सरायरंजन के बजाय मोरबा विधानसभा क्षेत्र पर जा टिकी हैं.

राजद एवं लोजपा के स्थानीय नेता भी नवगठित मोरबा विधानसभा क्षेत्र पर अपना अलग-अलग दावा ठोंक रहे हैं. ज़िले के मोहिउद्दीनगर विधानसभा क्षेत्र के राजद विधायक अजय कुमार बुल्गानिन भी इन दिनों मोरबा विधानसभा क्षेत्र में ज़्यादा दिख रहे हैं. चर्चा है कि बुल्गानिन भी मोहिउद्दीनगर के दियारा क्षेत्र की नाराजगी के चलते अपना क्षेत्र बदलने के मूड में हैं. नए परिसीमन के अंतर्गत नवगठित मोरबा विधानसभा क्षेत्र के बन जाने से लोगों को पूर्व ताजपुर विधानसभा क्षेत्र की याद आती है, क्योंकि पूर्व के ताजपुर विधानसभा क्षेत्र का प्रतिनिधित्व 1952 से ही समाजवादी नेता जननायक कर्पूरी ठाकुर करते रहे थे. लोगों को बड़ी उम्मीद थी कि नए परिसीमन के अंतर्गत जननायक की पहचान वाले पूर्व ताजपुर विधानसभा क्षेत्र को पुनर्जीवित किया जाएगा, लेकिन ताजपुर के बजाय मोरबा विधानसभा क्षेत्र गठित कर देने से समाजवादियों को गहरा आघात पहुंचा है. जैसे-जैसे राजग सरकार के दिन बीत रहे हैं, ज़िले में राजनीतिक सरगर्मी बढ़ती जा रही है और विभिन्न दलों के शीर्ष नेताओं का आवागमन भी बढ़ता जा रहा है.

ज़िले में राजग सरकार की पताका फहरा रहे जद-यू विधायक एवं मंत्री रामनाथ ठाकुर के समर्थकों के सामने अहम सवाल यह है कि ठाकुर आगामी विधानसभा चुनाव समस्तीपुर सीट से लड़ेंगे या फिर जननायक कर्पूरी ठाकुर की पहचान वाली नवगठित मोरबा सीट से?

feedback@chauthiduniya.com

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

चौथी दुनिया

दिल्ली, 9 नवंबर–15 नवंबर 2009

सीमांचल के इलाक़ों में नए ईंट भट्ठे संक्रामक बीमारी की तरह फैलते जा रहे हैं, जिन्हें तुरंत रोके जाने की ज़रूरत है. अन्यथा आने वाले समय में पर्यावरण संकट के साथ-साथ कृषि भूमि के क्षरण की समस्या से भी जूझना पड़ेगा.

प्रदूषण फैला रहे हैं ईंट भट्ठे

पूर्णियां प्रमंडल में इन दिनों ईंट भट्ठा उद्योग सोने का अंडा देने वाली मुर्गी बन गया है. इसलिए सारे नियम-क़ानून ताक़ पर रखकर जगह-जगह चिमनियों की स्थापना हो रही है. नतीजतन, पर्यावरण दिनोंदिन विषैला होता जा रहा है. कब जागेगा प्रशासन?

केंद्र व राज्य सरकारें पर्यावरण संकट को लेकर अक्सर हायतौबा मचाती रहती हैं. बिहार के सीमांचल यानी पूर्णियां, किशनगंज, अररिया एवं कटिहार ज़िलों में ईंट भट्ठों की संख्या में बेतहाशा वृद्धि से पर्यावरण पर आए संकट पर किसी की नज़र नहीं है. इससे न केवल प्रदूषण बढ़ा है, बल्कि उपजाऊ कृषि योग्य भूमि में कमी होने से एक नया संकट उत्पन्न हो गया है. आंकड़े बताते हैं कि 1990-2000 तक दस वर्षों की अवधि में पूर्णियां प्रमंडल के अररिया जिले में लगभग 10, किशनगंज में 15, कटिहार में 15 एवं पूर्णियां में 20 ईंट भट्ठे थे. जबकि इस समय पूर्णियां में ईंट भट्ठों की संख्या 60, अररिया में 40, कटिहार में 50 एवं किशनगंज में तक़रीबन 100 है. कई विकास कार्यों और भवन निर्माण में ईंटों की ज़रूरत होती है. साथ ही पड़ोसी राज्य बंगाल में भी ईंटों की ज़बरदस्त मांग है. इसलिए जो लोग दूसरे व्यवसायों में लगे थे, वे भी ईंट भट्ठा के व्यवसाय से जुड़ गए हैं. सीमांचल के इलाक़े में कृषि की प्रधानता है. यहां धान के साथ सफ़ेद सोना कहे जाने वाले पटसन की खेती प्रमुखता से की जाती है. इसके अलावा यहां केले एवं चाय की खेती भी व्यवसायिक तौर पर होती है. बारिश की प्रचुरता, उपजाऊ दोमट मिट्टी एवं नदी जल स्रोत आदि के कारण इस क्षेत्र की लगभग 17000 एकड़ ज़मीन पर धान की खेती होती है, वहीं 13000 एकड़ ज़मीन पर पटसन की. पेड़-पौधों की प्रचुरता के कारण यहां प्रदूषण का स्तर काफ़ी कम है, लेकिन बिना किसी नियंत्रण के ईंट भट्ठों की स्थापना के कारण यहां का पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है. इसके अलावा कृषि क्षेत्र का दायरा भी सिमटता जा रहा है. पूर्णियां स्थित खनन कार्यालय के पदाधिकारी कर्पूरी तांती के मुताबिक़, विगत कुछ सालों के अंदर किशनगंज जिले के बंगाल से सटने वाले इलाक़ों में ईंट भट्ठों की बाढ़ सी आ गई है. इसकी वजह बंगाल में ईंट के उत्पादन के लिए चिमनी के निर्माण को लेकर राज्य सरकार का कड़ा क़ानून है. उत्पादन के अनुसार टैक्स व कृषि भूमि में होने वाली क्षय एवं प्रदूषण के कारण स्थानीय लोगों के विरोध के चलते बंगाल में ईंट उत्पादन में काफ़ी परेशानी होती है और मुनाफ़ा भी ठीक नहीं हो पाता है. वहीं बिहार में ईंट उत्पादन को लेकर राज्य सरकार का क़ानून अधिक सरल और लचीला है और यही कई परेशानियों की वजह भी है. सीमांचल में सरकार के सरल क़ानून, पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध मज़दूर, जल स्रोत, दोमट चिकनी मिट्टी और सस्ती भूमि आदि के कारण ईंट निर्माण को अधिक मुनाफ़े वाले धंधे के रूप में देखा जा रहा है. सूत्रों पर भरोसा करें तो सीमांचल के इलाक़े में ख़ासकर किशनगंज के नेपाल एवं बंगाल की सीमा से सटे भू-भागों के ईंट भट्ठा मालिकों ने आदिवासियों की ज़मीन पर क़ब्ज़ा कर या फिर सस्ते में ज़मीन लेकर वहां अपना कारोबार शुरू कर दिया.

आज सीमांचल की ईंटें सिल्लीगुड़ी, जलपाईगुड़ी, उत्तरी दिनाजपुर, इस्लामपुर दार्जिलिंग और आलकोला आदि बंगाल के प्रमुख शहरों तक आसानी से पहुंच रही हैं. यहां प्रति हजार ईंट के लिए 4500 से लेकर 5500 रुपये तक की मुंहमांगी क़ीमत मिल जाती है. इस कारोबार से ईंट भट्ठा मालिक तो मालामाल हो रहे हैं, पर यहां काम करने वाले मज़दूरों की हालत बेहद दयनीय है. श्रम क़ानूनों का पालन न होने से इन्हें न तो उचित मज़दूरी मिल पाती है और न ही इनके स्वास्थ्य की बेहतर देखभाल हो पाती है. पटना से अध्ययन के लिए वहां गए कई दलों ने भी सीमांचल में बिगड़ते पर्यावरण को लेकर अपनी चिंता व्यक्त की है. उनका मानना है कि ईंट निर्माण के अनियंत्रित कारोबार पर अगर अंकुश न लगा तो यह पूरा इलाक़ा प्रदूषण की चपेट में आ जाएगा. सीमांचल के इलाक़ों में नए ईंट भट्ठे संक्रामक बीमारी की तरह फैलते जा रहे हैं, जिन्हें तुरंत रोके जाने की ज़रूरत है. अन्यथा आने वाले समय में पर्यावरण संकट के साथ-साथ कृषि भूमि के क्षरण की समस्या से भी जूझना पड़ेगा.

नीरज कुमार
feedback@chauthiduniya.com

भोजपुरिया कैटरीना पाखी

यूं तो भोजपुरी सिनेमा में कई सफल अभिनेत्रियां अक्सर चर्चा में रहती हैं, लेकिन यहां एक अभिनेत्री ऐसी भी है, जिसके बारे में कहा जाता है कि वह जिस फिल्म में काम करती है, उसका सुपर-डुपर हिट होना पक्का है. अब तक तो आप समझ ही गए होंगे कि हम किसकी बात कर रहे हैं. जी हां, यह नाम है पाखी हेगड़े.

भोजपुरी फिल्मों में सफलता की गारंटी बन चुकी पाखी हेगड़े की लोकप्रियता का आलम यह है कि वह निर्माताओं के लिए लकी चार्म बन गई हैं. लगातार कई हिट फिल्मों के बाद लोग उन्हें भोजपुरिया कैटरीना तक कहने लगे हैं. अपनी हालिया रिलीज फिल्म *प्रेम के रोग भइल* की सफलता से वह ख़ासी उत्साहित हैं. इस फिल्म में वह एक बार फिर अपने लकी जोड़ीदार निरहुआ के साथ ठुमके लगाती नज़र आ रही हैं. पाखी कहती हैं कि वैसे तो उन्होंने निरहुआ के साथ कई हिट फिल्में दी हैं, लेकिन यह फिल्म कई मायनों में ख़ास है. यह दिनेश लाल यादव के प्रोडक्शन हाउस *निरहुआ इंटरनेशनल* की पहली फिल्म है और इसमें युवा वर्ग के लिए संदेश है कि उन्हें शादी जैसे महत्वपूर्ण फ़ैसलों में अपने माता-पिता की राय भी लेनी चाहिए. फिल्म की दूसरी ख़ास बात यह है कि इसमें निरहुआ पहली बार एक महिला के रोल में दिखाई देंगे.

भोजपुरी फिल्मों में सफलता की गारंटी बन चुकी पाखी हेगड़े की लोकप्रियता का आलम यह है कि वह निर्माताओं के लिए लकी चार्म बन गई हैं. लगातार कई हिट फिल्मों के बाद लोग उन्हें भोजपुरिया कैटरीना तक कहने लगे हैं.

ग़ौरतलब है कि पाखी और निरहुआ अभिनीत सारी फिल्में बॉक्स ऑफिस पर कामयाब रही हैं. *निरहुआ रिक्शा वाला* से लेकर *प्रेम के रोग भइल* तक उनकी सभी फिल्मों ने सफलता के कई कीर्तिमान स्थापित किए हैं. निरहुआ भी इस बात को स्वीकार करते हैं कि पाखी उनकी फिल्मों के लिए लकी हैं. वैसे उन्होंने भोजपुरी सुपर स्टार रवि किशन के साथ सिर्फ *भूमिपुत्र* फिल्म में काम किया है. जबकि पवन सिंह के साथ हलिया रिलीज फिल्म *पवन पूरबिया* अपने सातवें सप्ताह में भी ज़बरदस्त कमाई कर रही है. पाखी के मुताबिक़, वह निरहुआ और मोनालिसा के साथ फिल्म *लोफर* में जल्द ही नज़र आएंगी. देखना दिलचस्प होगा कि कटीले नयनों वाली पाखी का लकी चार्म इस बार काम आता है या नहीं.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

रामविलास पासवान जिन्दाबाद
लालू यादव जिन्दाबाद

रामविलास पासवान

लालू प्रसाद

'चौथी दुनिया'
बिहार-झारखंड
संस्करण
के शुभारम्भ पर
लोजपा-राजद
की ओर से
हार्दिक
शुभकामनायें

पशुपति कुमार
'पारस'
लोजपा प्रदेश अध्यक्ष

सोनिया गांधी जिन्दाबाद
राहुल गांधी जिन्दाबाद
जगदीश टाइटलर जिन्दाबाद
अनिल शर्मा जिन्दाबाद

'चौथी दुनिया' बिहार-झारखंड संस्करण
के शुभारम्भ पर
चम्पारणवासियों
की ओर से
हार्दिक
शुभकामनायें

अरविन्द गुप्ता